कामन्दकीय नीतिसार – चतुर्थः सर्गः (प्रकृतिसम्पत्प्रकरणम्)

(Kamandakiya Nītisara – Sarga 4: Prakṛtisampatprakaraṇam)



मूल ग्रन्थकार (Original Author) ; आचार्य कामन्दक (Ā*cārya Kāmandaka)*

व्याख्या एवं प्रस्तुति (Commentary & Presentation) ; *Indian Philosophy & Ethics*

लेखक / संपादक (Author / Editor) ; *Anand Singh Dhami*

विषय क्षेत्र (Subject Area) ; भारतीय दर्शन, नीतिशास्त्र, राजधर्म , राज्यशास्त्र , नेतृत्व अध्ययन, सुशासन, संस्कृत साहित्य, भारतीय ज्ञान परम्परा, सार्वजनिक प्रशासन

संक्षिप्त परिचय ; *कामन्दकीय नीतिसार* के **चतुर्थः सर्ग – *प्रकृतिसम्पत्प्रकरणम्*** का हिन्दी अनुवाद, IAST लिप्यन्तरण, शब्दार्थ, भावार्थ, दार्शनिक विवेचन तथा आधुनिक नेतृत्व, सुशासन, राजधर्म, राज्य-प्रशासन एवं नैतिक शासन की दृष्टि से विस्तृत विश्लेषण। इस सर्ग में आदर्श राजा के व्यक्तित्व, आत्मसम्पदा, बुद्धि के सात गुण, उत्साह, त्याग, सत्य, शौर्य, योग्य मंत्रियों के चयन, दण्डनीति, कूटनीति तथा राज्य की प्रकृतियों के महत्त्व का क्रमबद्ध निरूपण किया गया है। साथ ही इन सिद्धान्तों की समकालीन प्रशासन, सार्वजनिक नीति (Public Policy), रणनीतिक प्रबन्धन (Strategic Management) एवं सुशासन (Good Governance) के परिप्रेक्ष्य में भी व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

ऑनलाइन लेख: *https://indianphilosophyethics.blogspot.com/2026/07/kamandakiya-nitisara-tritiya-sarga.html*

प्रस्तावना

भारतीय नीतिशास्त्र की गौरवशाली परम्परा में **कामन्दकीय नीतिसार** एक ऐसा ग्रन्थ है, जो शासन, प्रशासन, कूटनीति तथा नेतृत्व के सिद्धान्तों का समन्वित एवं व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। महर्षि कामन्दक ने राजधर्म को केवल राज्य-विस्तार अथवा राजनीतिक सफलता का माध्यम नहीं माना, बल्कि उसे लोककल्याण, न्याय, आत्मसंयम और नैतिक आचरण पर आधारित उत्तरदायी शासन की व्यवस्था के रूप में प्रतिपादित किया है।

प्रकृतिसम्पत्प्रकरणम्, अर्थात् *कामन्दकीय नीतिसार* का चतुर्थः सर्ग, आदर्श राजा के व्यक्तित्व, आत्मसम्पदा तथा राज्य की समृद्धि के लिए आवश्यक गुणों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करता है। इस सर्ग में यह प्रतिपादित किया गया है कि किसी भी राज्य की वास्तविक शक्ति उसके धन, सेना अथवा बाह्य वैभव में नहीं, बल्कि उसके शासक के चरित्र, विवेक, आत्मसंयम, निर्णय-क्षमता तथा योग्य सहयोगियों में निहित होती है। एक गुणसम्पन्न एवं लोकहितैषी राजा ही प्रजा के लिए पिता के समान आश्रयदाता बन सकता है तथा राज्य को स्थायी समृद्धि की ओर अग्रसर कर सकता है।

इस पुस्तक में चतुर्थ सर्ग के प्रत्येक श्लोक का मूल संस्कृत पाठ, IAST लिप्यन्तरण, शब्दार्थ, भावार्थ, दार्शनिक विवेचन तथा आधुनिक नेतृत्व, सुशासन, सार्वजनिक प्रशासन और रणनीतिक प्रबन्धन के परिप्रेक्ष्य में विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। विशेष रूप से आत्मसम्पदा, बुद्धि के सात गुण, उत्साह के लक्षण, त्याग, सत्य, शौर्य तथा योग्य मंत्रियों के गुणों को आधुनिक शासन और नेतृत्व की कसौटी पर समझाने का प्रयास किया गया है।

आशा है कि यह पुस्तक भारतीय दर्शन, नीतिशास्त्र, राजधर्म, संस्कृत साहित्य, प्रशासनिक अध्ययन तथा भारतीय ज्ञान-परम्परा के विद्यार्थियों, शोधार्थियों एवं जिज्ञासु पाठकों के लिए एक उपयोगी और प्रमाणिक अध्ययन-सामग्री सिद्ध होगी।

श्लोक १ (सप्ताङ्ग राज्य की परिभाषा)

श्लोक
स्वाम्य् अमात्यश् च राष्ट्रं च दुर्गं कोशो बलं सुहृत् । परस्परोपकारीदं सप्ताङ्गं राज्यम् उच्यते ॥१॥

IAST
svāmy amātyaś ca rāṣṭraṃ ca durgaṃ kośo balaṃ suhṛt | parasparopakārīdaṃ saptāṅgaṃ rājyam ucyate ||1||

शब्दार्थ
• **स्वामी** – राजा (शासक)

• **अमात्यः** – मंत्री / सचिव

• **राष्ट्रम्** – प्रजा एवं भू-भाग

• **दुर्गम्** – किला / सुरक्षा-व्यवस्था

• **कोशः** – खजाना (अर्थ-भण्डार)

• **बलम्** – सेना (शारीरिक एवं शस्त्र-बल)

• **सुहृत्** – मित्र (सहायक राज्य / संधि-साथी)

• **परस्परोपकारी** – एक-दूसरे का उपकार करने वाले

• **इदम्** – यह (सातों मिलकर)

• **सप्ताङ्गम्** – सात अंगों वाला

• **राज्यम्** – राज्य

• **उच्यते** – कहा जाता है।

भावार्थ
राज्य केवल राजा या केवल भूमि नहीं, बल्कि सात जीवित अंगों का समूह है—स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, बल और सुहृत्। ये सभी 'परस्परोपकारी' हैं, अर्थात् एक-दूसरे पर आश्रित एवं सहायक हैं। जैसे शरीर के अंग एक-दूसरे के बिना असमर्थ हैं, वैसे ही राज्य के ये अंग भी परस्पर सहयोग से ही सशक्त होते हैं। यह राज्य को एक जैविक इकाई (ऑर्गेनिक यूनिट) मानने का दृष्टिकोण है, जहाँ किसी एक अंग की उपेक्षा सम्पूर्ण राज्य-तंत्र को प्रभावित करती है।

दार्शनिक विवेचन

यह श्लोक भारतीय राजनीति-दर्शन के 'जैविक सिद्धान्त' (ऑर्गेनिक थ्योरी) को प्रतिबिम्बित करता है, जो प्लेटो और अरस्तू के 'शरीर-राज्य सादृश्य' से मेल खाता है। 'अङ्ग' शब्द सांख्य-योग के 'पुरुष-प्रकृति' एवं आयुर्वेद के 'त्रिदोष' सिद्धान्त की भाँति है—जहाँ सम्पूर्णता ही स्वास्थ्य है। यह 'अद्वैत' भावना से भी जुड़ता है, क्योंकि सभी अंग परस्पर-उपकारी हैं, अर्थात् उनका पृथक् अस्तित्व अर्थहीन है। यह राज्य के उद्देश्य को केवल भोग न मानकर सबके कल्याण (सामग्र्य) में स्थापित करता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक युग में यह 'होलिस्टिक गवर्नेंस' (समग्र शासन) का सिद्धान्त है। किसी भी देश की सफलता के लिए कार्यपालिका (स्वामी), नौकरशाही (अमात्य), नागरिक-समाज (राष्ट्र), रक्षा-बुनियादी ढाँचा (दुर्ग), वित्तीय संस्थाएँ (कोश), सशस्त्र बल (बल) एवं अंतर्राष्ट्रीय मित्र-राष्ट्र (सुहृत)—सभी का समन्वय आवश्यक है। कोविड-काल में स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था और राजनीतिक नेतृत्व के परस्पर संबंध ने इस सत्य को पुनः सिद्ध किया।

श्लोक २ (सप्ताङ्गों की पूर्णता का परीक्षण)

श्लोक

एकाङ्गेनापि विकलम् एतत् साधु न वर्तते । तस्य सामग्र्यम् अन्विच्छन् कुर्वीताशु परीक्षणम् ॥२॥

IAST
ekāṅgenāpi vikalam etat sādhu na vartate | tasya sāmagryam anvicchan kurvītāśu parīkṣaṇam ||2||

शब्दार्थ
• **एकाङ्गेन** – एक अंग से (मात्र)

• **अपि** – भी

• **विकलम्** – विकलांग / अपूर्ण
• **एतत्** – यह (राज्य)
• **साधु** – अच्छी तरह
• **न वर्तते** – नहीं चलता
• **तस्य** – उस (राज्य) की

• **सामग्र्यम्** – समग्रता / पूर्णता
• **अन्विच्छन्** – चाहता हुआ / इच्छुक
• **कुर्वीत** – करे
• **आशु** – शीघ्र
• **परीक्षणम्** – जाँच-पड़ताल।

भावार्थ
राज्य के सातों अंगों में यदि एक भी अंग दुर्बल या लुप्त हो जाए, तो सम्पूर्ण राज्य-व्यवस्था ठीक से संचालित नहीं हो सकती। इसलिए जो राजा अपने राज्य की समग्रता (सामग्री) चाहता है, उसे तुरंत (आशु) सभी अंगों की गहन परीक्षा करनी चाहिए। यह 'श्रृंखला का सबसे कमज़ोर कड़ी' वाले आधुनिक सिद्धान्त का प्राचीन संस्करण है।

दार्शनिक विवेचन

दार्शनिक दृष्टि से यह 'प्रमाण-मीमांसा' से जुड़ा है। राज्य-तंत्र की 'सामग्री' (समग्रता) को समझने के लिए 'परीक्षण' अनिवार्य है—यह न्याय-दर्शन की 'परीक्षणवादी' मान्यता है। 'आशु' (शीघ्रता) बौद्ध 'क्षणिकवाद' (प्रतिक्षण परिवर्तनशीलता) और अर्थशास्त्र के 'आपत्कालीन प्रबंधन' से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक व्यवस्थापन में इसे 'होलिस्टिक रिस्क असेसमेंट' और 'SWOT विश्लेषण' कहते हैं। वर्तमान समय में 'नेशनल सिक्योरिटी काउंसिल' या 'फाइनेंशियल स्टैबिलिटी बोर्ड' का गठन इसी 'आशु परीक्षण' (शीघ्र समीक्षा) हेतु किया जाता है। एक अंग की उपेक्षा सम्पूर्ण व्यवस्था को अस्थिर करती है—यह 'रियल-टाइम डेटा मॉनीटरिंग' की प्रासंगिकता को रेखांकित करता है।

श्लोक ३ (राजा का प्रथम आत्म-संस्कार)

श्लोक
आत्मानम् एव प्रथमम् इच्छेद् गुणसमन्वितम् । कुर्वीत गुणसम्पन्नस् ततः शेषपरीक्षणम् ॥३॥

IAST
ātmānam eva prathamam icched guṇasamanvitam | kurvīta guṇasampannas tataḥ śeṣaparīkṣaṇam ||3||

शब्दार्थ
• **आत्मानम्** – अपने आपको (स्वयं)
• **एव** – ही
• **प्रथमम्** – पहले
• **इच्छेत्** – चाहे / बनाना चाहे
• **गुणसमन्वितम्** – गुणों से युक्त
• **कुर्वीत** – करे
• **गुणसम्पन्नः** – गुणों से सम्पन्न होकर
• **ततः** – उसके बाद
• **शेषपरीक्षणम्** – शेष (अन्य) अंगों की परीक्षा।

भावार्थ
राजा सबसे पहले स्वयं को गुणसम्पन्न बनाने का प्रयास करे। जब वह स्वयं सद्गुणों से पूर्ण हो जाए, तभी वह अन्य छः अंगों—मंत्री, प्रजा, दुर्ग, कोश, बल और मित्र—की जाँच करे। बिना आत्म-संस्कार के शासक दूसरों की कमियाँ न तो ठीक से पहचान सकता है और न ही उन्हें दूर कर सकता है। यह राजा को 'दर्पण' के समान बताता है—यदि दर्पण स्वयं मैला है तो वह सृष्टि को स्पष्ट नहीं दिखा सकता।

दार्शनिक विवेचन

यह 'अध्यात्म-राजनीति' का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो उपनिषदों के 'आत्मनो ज्ञानार्थं' (आत्म-ज्ञान के लिए) सिद्धान्त को राज्य-प्रशासन पर आरोपित करता है। सुकरात का 'नो योरसेल्फ' और बुद्ध का 'अत्तदीपो भव' इसी की पुष्टि करते हैं। 'गुणसम्पन्नता' का अर्थ केवल बाहरी योग्यता नहीं, बल्कि 'सत्त्वगुण' (शुद्धता, संयम, ज्ञान) की प्रधानता है—जैसा सांख्य-योग में वर्णित है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबंधन विज्ञान में इसे 'लीडरशिप फ्रॉम द फ्रंट' (स्वयं नेतृत्व) तथा 'इमोशनल इंटेलिजेंस' (भावनात्मक बुद्धिमत्ता) कहते हैं। आज की शीर्ष प्रबंधन संस्थाएँ (हार्वर्ड, ISB) नेतृत्व-प्रशिक्षण में 'सेल्फ-अवेयरनेस' को प्राथमिकता देती हैं। भारतीय संदर्भ में 'राष्ट्र-प्रथम' की भावना तभी सफल हो सकती है जब नेता 'आत्म-प्रथम' (स्वयं का नैतिक-संवर्धन) करे।

श्लोक ४ (भूतलदेवत्व एवं आत्मसंस्कार की अनिवार्यता)

श्लोक

साधु भूतलदेवत्वं दुर्धार्यम् अकृतात्मभिः । आत्मसंस्कारसम्पन्नो राजा भवितुम् अर्हति ॥४॥

IAST
sādhu bhūtaladevatvaṃ durdhāryam akṛtātmabhiḥ | ātmasaṃskārasampanno rājā bhavitum arhati ||4||

शब्दार्थ
• **साधु** – निश्चय ही / वास्तव में
• **भूतलदेवत्वम्** – पृथ्वी-तल पर देवता होने का भाव (राज-पद)
• **दुर्धार्यम्** – धारण करने में अत्यंत कठिन
• **अकृतात्मभिः** – जिन्होंने अपनी आत्मा को संस्कारित/शुद्ध नहीं किया है
• **आत्मसंस्कारसम्पन्नः** – आत्म-संस्कार से पूर्ण
• **राजा** – राजा
• **भवितुम्** – होने के लिए
• **अर्हति** – योग्य है / अधिकारी है।

भावार्थ
राजा को 'भूतलदेव' (धरती पर देवता) कहकर राज-पद की गरिमा एवं गुरुता को उजागर किया गया है। यह पद इतना कठिन (दुर्धार्य) है कि जिसने स्वयं को नहीं सँभाला (अकृतात्मा), वह इसे सुचारु रूप से धारण नहीं कर सकता। राज-पद भोग-विलास का साधन नहीं, बल्कि एक कठोर तपस्या है। केवल वही राजा बनने के योग्य है, जिसने 'आत्मसंस्कार'—शास्त्राध्ययन, संयम, नैतिक शुद्धि, इन्द्रिय-निग्रह—द्वारा स्वयं को परिष्कृत कर लिया हो।

दार्शनिक विवेचन

यह भारतीय राजधर्म का मूल मंत्र है। 'भूतलदेव' की अवधारणा मनुस्मृति और महाभारत (शान्ति-पर्व) में भी मिलती है। दार्शनिक रूप से यह 'अस्मिता' (अहंकार) के विरुद्ध चेतावनी है—वास्तविक देवत्व 'संस्कार' (निरंतर अभ्यास एवं शुद्धि) में है। यह गीता के 'अनासक्त कर्मयोग' से मेल खाता है—राजा को फल की आसक्ति त्याग कर कर्तव्य-पालन करना चाहिए।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राजनीति विज्ञान और मनोविज्ञान में 'पावर करप्ट्स' (शक्ति भ्रष्ट करती है) का सिद्धांत इसी श्लोक से प्रमाणित होता है। बिना मजबूत नैतिक आधार (संस्कार) के नेता नार्सिसिस्ट, अहंकारी और शोषक बन जाते हैं। इसीलिए आधुनिक लोकतंत्रों में संविधान की शपथ, ईमानदारी की सार्वजनिक घोषणा, और नैतिकता-आयोग (जैसे लोकपाल) की स्थापना इसी 'संस्कार' को बाह्य रूप से लागू करने का प्रयास है।

श्लोक ५ (आत्म-संस्कार में स्थिर सम्पदा)

श्लोक

लोकाधाराः श्रियो राज्ञां दुरापा दुष्परिग्रहाः । तिष्ठन्त्य् आप इवाधारे चिरम् आत्मनि संस्कृते ॥५॥

IAST
lokādhārāḥ śriyo rājñāṃ durāpā duṣparigrahāḥ | tiṣṭhanty āpa ivādhāre ciram ātmani saṃskṛte ||5||

शब्दार्थ
- **लोकाधाराः** – प्रजा पर आधारित / प्रजा-आश्रित
- **श्रियः** – सम्पत्तियाँ / ऐश्वर्य
- **राज्ञाम्** – राजाओं की
- **दुरापाः** – प्राप्त करने में कठिन
- **दुष्परिग्रहाः** – धारण करने/संभालने में कठिन
- **तिष्ठन्ति** – स्थिर रहती हैं
- **आपः** – जल
- **इव** – के समान
- **आधारे** – बाँध-युक्त जलाशय
- **चिरम्** – लम्बे समय तक
- **आत्मनि** – अपने (राजा के) स्वरूप में
- **संस्कृते** – जो संस्कारित / परिष्कृत / सुसंस्कृत हो।

भावार्थ
राजाओं की सम्पत्ति एवं वैभव (श्री) मूलतः प्रजा (लोक) पर ही आश्रित होते हैं। यह ऐश्वर्य प्राप्त करना अत्यंत कठिन और बनाए रखना और भी कठिन है। किन्तु यदि राजा 'आत्म-संस्कार' से सम्पन्न है, तो यह सम्पत्ति उसी प्रकार स्थिर रहती है, जैसे बाँध-युक्त जलाशय में जल चिरकाल तक ठहरा रहता है। राजा का आत्म-संस्कार ही वह 'बाँध' है, जो ऐश्वर्य को प्रवाहित होने से रोकता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'आधार-आधेय' (सहारा-आश्रित) अवधारणा को राजनीति पर लागू करता है। जैसे वेदान्त में ब्रह्म विश्व का आधार है, वैसे ही यहाँ 'आत्म-संस्कार' राज-सम्पदा का आधार है। 'आप इवाधारे' का रूपक अद्भुत है—जल का स्वभाव अनियंत्रित बहना है, पर बाँध उसे अनुशासित करता है; वैसे ही राज-सत्ता का स्वभाव विलास में बहना है, पर संस्कार उसे मर्यादित करता है।

आधुनिक संदर्भ

वर्तमान युग में किसी देश की संपत्ति (जीडीपी) सीधे 'मानव संसाधन' (लोक) पर आधारित है। 'आत्म-संस्कार' का तात्पर्य आज के 'भावनात्मक बुद्धिमत्ता' (ईक्यू), 'नैतिक नेतृत्व' एवं 'संकट-प्रबंधन-क्षमता' से है। टाटा या बिरला जैसे समूहों की दीर्घायु उनके संस्थागत 'संस्कार' में निहित है।

श्लोक ६ (राजा के प्रथम दस गुण)

श्लोक
कुलं सत्त्वं वयः शीलं दाक्षिण्यं क्षिप्रकारिता । अविसंवादिता सत्यं वृद्धसेवा कृतज्ञता ॥६॥

IAST
kulaṃ sattvaṃ vayaḥ śīlaṃ dākṣiṇyaṃ kṣiprakāritā | avisaṃvāditā satyaṃ vṛddhasevā kṛtajñatā ||6||

शब्दार्थ
• **कुलम्** – कुल / वंश-गौरव
• **सत्त्वम्** – आन्तरिक साहस / मानसिक बल
• **वयः** – युवावस्था / आयु
• **शीलम्** – सदाचार / चरित्र
• **दाक्षिण्यम्** – सौम्यता / पर-हित-तत्परता
• **क्षिप्रकारिता** – शीघ्र कार्य करने की क्षमता
• **अविसंवादिता** – बात पर खरा उतरना / विश्वसनीयता
• **सत्यम्** – सत्यवादिता
• **वृद्धसेवा** – बुजुर्गों/अनुभवियों की सेवा/शुश्रूषा
• **कृतज्ञता** – उपकार-स्मरण / आभार-भावना।

भावार्थ
राजा में कुल-गौरव, आन्तरिक साहस, युवा-ऊर्जा, सदाचार, सौम्यता, शीघ्रकारिता, विश्वसनीयता, सत्य, वृद्ध-सेवा और कृतज्ञता—ये दस गुण होने चाहिए। ये राजा के व्यक्तित्व की आधारशिला हैं। विशेषकर 'अविसंवादिता' (वचन-पालन) और 'कृतज्ञता' राजा को प्रजा एवं सेवकों से बाँधते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह सूची 'राजर्षि' के आदर्श को प्रतिबिम्बित करती है। 'शील' एवं 'दाक्षिण्य' सभी नैतिक दर्शनों में अनिवार्य हैं। 'वृद्धसेवा' भारतीय परंपरा की 'आश्रम-व्यवस्था' एवं 'गुरु-शिष्य' परंपरा को दर्शाती है। 'अविसंवादिता' न्यायदर्शन की 'वाद-प्रतिवाद' की पारिभाषिक शुद्धता को राजनीति पर लागू करती है।

आधुनिक संदर्भ

ये गुण आज के 'लीडरशिप कम्पीटेंसी मॉडल' का सटीक प्राचीन संस्करण हैं। 'शीघ्रकारिता' (क्षिप्रकारिता) आज के VUCA संसार में 'एजाइल लीडरशिप' है। 'कृतज्ञता' (ग्रैटिट्यूड) आधुनिक मनोविज्ञान में कर्मचारी-प्रतिधारण एवं ब्रांड-लॉयल्टी का महत्वपूर्ण कारक है।

श्लोक ७ (राजा के छः अन्य गुण)

श्लोक
दैवसम्पन्नता बुद्धिर् अक्षुद्रपरिवारता । शक्यसामन्तता चैव तथा च दृढभक्तिता ॥७॥

IAST
daivasampannatā buddhir akṣudraparivāratā | śakyasāmantatā caiva tathā ca dṛḍhabhaktitā ||7||

शब्दार्थ
- **दैवसम्पन्नता** – भाग्य / ईश्वर-अनुग्रह
- **बुद्धिः** – तीक्ष्ण एवं विवेकपूर्ण बुद्धि
- **अक्षुद्रपरिवारता** – क्षुद्र (निम्न/दुष्ट) परिवार/सेवक-वर्ग से रहित; उत्तम परिजन एवं मंडल
- **शक्यसामन्तता** – पड़ोसी/सामन्त राज्यों को वश में करने/सम्भालने की क्षमता
- **चैव** – (च + एव) – और भी
- **तथा** – इसी प्रकार
- **दृढभक्तिता** – दृढ भक्ति (अपने कर्तव्य, गुरु, एवं सिद्धान्तों के प्रति अटूट निष्ठा)।

भावार्थ
पूर्व श्लोक के गुणों के अतिरिक्त राजा में दैवीय सहायता, बुद्धि, उत्तम परिवार/सेवक-वर्ग, सामन्तों को नियंत्रित करने की क्षमता, और दृढ़-भक्ति होनी चाहिए। 'दैवसम्पन्नता' का अर्थ है—पुरुषार्थ के साथ ईश्वरीय कृपा एवं अनुकूल योग भी एक तत्त्व है। 'अक्षुद्रपरिवारता' अत्यंत महत्वपूर्ण है—राजा के आस-पास सभी उदात्त एवं सज्जन हों।

दार्शनिक विवेचन

यहाँ 'दैव' एवं 'पुरुषकार' (बुद्धि) का युगपत् उल्लेख अत्यंत दार्शनिक है—यह 'योग-द्वैत' या 'सांख्य-पुरुष-प्रकृति' के समन्वय को राजकीय क्षेत्र में प्रस्तुत करता है। गीता (१८.१४) में 'अधिष्ठान, कर्ता, करण, चेष्टा और दैव'—पाँच कारण बताए गए हैं; यहाँ कामन्दक उसी 'दैव' को स्पष्ट करते हैं।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबंधन में 'दैव' को हम 'टाइमिंग' (समय-सारिणी) कह सकते हैं। 'अक्षुद्रपरिवारता' का आधुनिक रूप है—'टीम कंपोज़िशन': राजा/सीईओ को अपने आस-पास दूरदर्शी, नैतिक एवं सक्षम लोगों को रखना चाहिए। 'शक्यसामन्तता' आधुनिक अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की 'क्षेत्रीय सुरक्षा' एवं 'बैलेंस ऑफ पावर' नीति से मेल खाती है।

श्लोक ८ (राजा के अन्तिम सात गुण)

श्लोक
दीर्घदर्शित्वम् उत्साहः शुचिता स्थूललक्षता । विनीतता धार्मिकता गुणाः साध्वाभिगामिकाः ॥८॥

IAST
dīrghadarśitvam utsāhaḥ śucitā sthūlalakṣatā | vinītatā dhārmikatā guṇāḥ sādhvābhigāmikāḥ ||8||

शब्दार्थ
• **दीर्घदर्शित्वम्** – दूरदर्शिता / भविष्य-दृष्टि
• **उत्साहः** – स्फूर्ति / कर्म-प्रेम
• **शुचिता** – शौच / आन्तरिक एवं बाह्य पवित्रता
• **स्थूललक्षता** – महान् उद्देश्य (क्षुद्र-लक्ष्य वृत्ति का अभाव)
• **विनीतता** – नम्रता / शिष्टता
• **धार्मिकता** – धर्मनिष्ठता / न्याय-प्रियता
• **गुणाः** – ये सब गुण
• **साध्वाभिगामिकाः** – सज्जनों द्वारा प्राप्य / जो राजा को सज्जनों के समीप लाते हैं।

भावार्थ
राजा के अन्तिम सात गुण—दूरदर्शिता, उत्साह, शुचिता, महान-लक्ष्य-दृष्टि, विनम्रता, धार्मिकता—हैं। ये सभी गुण राजा को सज्जनों (विद्वान, न्यायप्रिय, तपस्वी) की आँखों में आदरणीय एवं सुलभ बनाते हैं। 'स्थूललक्षता' का तात्पर्य 'महान् लक्ष्य' से है—राजा क्षुद्र पद-लालसा या प्रतिशोध न रखे, बल्कि सर्वहित का बड़ा लक्ष्य देखे।

दार्शनिक विवेचन

'दीर्घदर्शित्व' बौद्ध 'प्रतीत्यसमुत्पाद' (कार्य-कारण-श्रृंखला का दूर-द्रष्टा होना) एवं अर्थशास्त्र के 'आन्वीक्षिकी' (तर्कशास्त्र) का फल है। 'विनीतता' वेदान्त के 'अहंकार-त्याग' को राजा पर लागू करती है। 'साध्वाभिगामिकाः' शब्द 'सत्संगति' के महत्व को बताता है—जैसे 'सत्संगति' मोक्ष का मार्ग है, वैसे ही राजा के सत्पुरुषों से संपर्क से राज्य-मार्ग प्रशस्त होता है।

आधुनिक संदर्भ

ये गुण २१वीं सदी के 'सस्टेनेबल लीडरशिप' के लिए आदर्श हैं। 'दीर्घदर्शित्व'—जलवायु परिवर्तन, एआई नीति, जनसांख्यिकीय लाभांश जैसे मुद्दों पर नीति-निर्माण। 'विनीतता'—आधुनिक प्रबंधन में 'सर्वेंट लीडरशिप' (नौकर-नेता) का मूल मंत्र है। 'धार्मिकता'—यहाँ संवैधानिक नैतिकता एवं सामाजिक न्याय से तात्पर्य है।

श्लोक ९ (लोकाभिगम्यता / जन-सुलभता)

श्लोक
गुणैर् एतैर् उपेतः सन् सुव्यक्तम् अभिगम्यते । तथा तु कुर्वीत यथा गच्छेल् लोकाभिगम्यताम् ॥९॥

IAST
guṇair etair upetaḥ san suvyaktam abhigamyate | tathā tu kurvīta yathā gacchel lokābhigamyatām ||9||

शब्दार्थ
• **गुणैः** – गुणों से
• **एतैः** – इन (पूर्वोक्त)
• **उपेतः** – युक्त
• **सन्** – होकर
• **सुव्यक्तम्** – स्पष्ट रूप से
• **अभिगम्यते** – जाना / पहचाना जाता है (लोग उसके पास आते हैं)
• **तथा** – वैसा
• **कुर्वीत** – करना चाहिए
• **यथा** – जिस प्रकार
• **गच्छेत्** – प्राप्त करे
• **लोकाभिगम्यताम्** – लोक-सुलभता / प्रजा का स्वतः आगमन।

भावार्थ
पूर्व वर्णित गुणों से युक्त राजा स्वतः ही सबके लिए सुस्पष्ट एवं सुलभ हो जाता है। परन्तु राजा को सक्रिय रूप से ऐसा आचरण भी करना चाहिए कि जनसामान्य निर्भय होकर, बिना किसी बाधा के उसके पास आ सके। 'लोकाभिगम्यता'—प्रजा का राज-दरबार तक पहुँचना—ही राजा की लोकप्रियता की कसौटी है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'लोकसंग्रह' (जन-कल्याण) की उपनिषदीय एवं गीता-दर्शन की अवधारणा को राज्य-व्यवहार में उतारता है। गीता (३.२०) में 'लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्' कहा गया है। दार्शनिक रूप से यह 'सत्ता का अहंकार' (पॉवर-एगो) को तोड़ता है; राजा को 'अभिगम्य' होना ही होगा, अन्यथा वह केवल प्रतीक (symbol) रह जाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक लोकतंत्र में 'अभिगम्यता' (accessibility) को 'गुड गवर्नेंस' का अनिवार्य अंग माना गया है। 'जन सुनवाई' (public hearings), 'ग्राम सभाएँ', 'ई-पोर्टल' और 'सोशल मीडिया' इसी 'लोकाभिगम्यता' के आधुनिक उपकरण हैं। कोरोना काल में जिन नेताओं ने सीधे प्रभावितों से संवाद किया, वे अधिक सफल हुए।

श्लोक १० (राजा के परिवार के गुण)

श्लोक
प्रख्यातवंशम् अक्रूरं लोकसङ्ग्राहिणं शुचिम् । कुर्वीतात्महिताकाङ्क्षी परिवारं महीपतिः ॥१०॥

IAST
prakhyātavaṃśam akrūraṃ lokasaṅgrāhiṇaṃ śucim | kurvītātmahitākāṅkṣī parivāraṃ mahīpatiḥ ||10||

शब्दार्थ
• **प्रख्यातवंशम्** – प्रसिद्ध/उच्च कुल में उत्पन्न
• **अक्रूरम्** – क्रूरतारहित, सौम्य
• **लोकसङ्ग्राहिणम्** – जनता को आकर्षित/प्रसन्न करने वाला
• **शुचिम्** – पवित्र, निष्कपट, सत्याचारी
• **कुर्वीत** – बनाए / सुधारे

• **आत्महिताकाङ्क्षी** – अपना कल्याण चाहने वाला
• **परिवारम्** – परिवार, निकटवर्ती जन
• **महीपतिः** – राजा / पृथ्वी-स्वामी।

भावार्थ
अपना कल्याण चाहने वाला राजा अपने परिवारजनों एवं निकटतम लोगों को चार गुणों—प्रख्यात वंश, अक्रूरता (दया/सौम्यता), लोकसंग्राहकता (जन-आकर्षण), और शुचिता (पवित्रता/ईमानदारी)—से युक्त करे। राजा का 'अंतरंग मंडल' यदि सज्जन एवं गुणी हो तो राज-सम्मान एवं जन-विश्वास बना रहता है।

दार्शनिक विवेचन

भारतीय दर्शन में 'परिवार' को समाज का लघुरूप (microcosm) माना गया है। 'अक्रूर' शब्द विशेष महत्व रखता है—क्रूरता से रहित व्यक्ति ही सच्चा 'क्षत्रिय' होता है, क्योंकि अत्यधिक कठोरता प्रजा से वैर पैदा करती है। यह 'दयालु शासन' की दार्शनिक धारणा है, जो 'अहिंसा परमो धर्मः' से प्रभावित है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राजनीति में 'परिवार' को 'आंतरिक वृत्त' (inner circle) कहा जाता है—मंत्रिमंडल, सलाहकार, या सीनियर वीपी। कामन्दक कहते हैं कि नातेदारी नहीं, बल्कि गुण (प्रख्यात वंश, अक्रूरता, शुचिता) परिवार-चयन का आधार होना चाहिए। प्रधानमंत्री कार्यालय या मुख्यमंत्री आवास का वातावरण सीधे जन-धारणा को प्रभावित करता है।

श्लोक ११ (परिवार-गुणों का राजा पर प्रभाव)

श्लोक
दुष्टोऽपि भोग्यताम् एति परिवारगुणैर् नृपः । न दुष्टपरिवारस् तु व्यालाक्रान्त इव द्रुमः ॥११॥

IAST
duṣṭo'pi bhogyatām eti parivāraguṇair nṛpaḥ | na duṣṭaparivāras tu vyālākrānta iva drumaḥ ||11||

शब्दार्थ
• **दुष्टः** – दोषयुक्त (अल्प-दोष वाला, कमजोर)
• **अपि** – भी
• **भोग्यताम्** – उपभोग-योग्यता / जन-स्वीकार्यता
• **एति** – प्राप्त होता है
• **परिवारगुणैः** – परिवार के गुणों द्वारा
• **नृपः** – राजा
• **न** – नहीं
• **दुष्टपरिवारः** – दुष्ट/बुरे परिवार वाला राजा
• **तु** – परन्तु
• **व्यालाक्रान्तः** – सर्प (या हिंसक पशु) से आक्रान्त
• **इव** – समान
• **द्रुमः** – वृक्ष / पेड़।

भावार्थ
यदि राजा स्वयं कुछ दोष-युक्त (अल्प-गुणी) हो, तो भी यदि उसका परिवार (आश्रित, मंत्री, कुटुम्बी) गुणी हो, तो राजा 'भोग्य' (जन-स्वीकार्य) बना रह सकता है। किन्तु जिस राजा का परिवार स्वयं दुष्ट, अत्याचारी या भ्रष्ट है, वह राजा उस वृक्ष

के समान है जो सर्प (व्याल) से घिरा हो—कोई भी व्यक्ति उसके निकट नहीं जाता। राजा के दोष उसके परिवार के गुणों से आच्छादित हो सकते हैं, परन्तु परिवार के दोष सम्पूर्ण राज-व्यवस्था को नष्ट कर देते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह 'संगति-दर्शन' (philosophy of association) पर आधारित है—मनुष्य अपने परिवेश से निर्मित होता है। 'व्यालाक्रान्त द्रुम' (सर्प-ग्रस्त वृक्ष) की उपमा अत्यन्त प्रभावी है—सर्प वृक्ष का अंग नहीं है, फिर भी वह उसे अप्राप्य कर देता है। इसी प्रकार, दुष्ट परिवार राजा की सारी कीर्ति को जनता की दृष्टि में नष्ट कर देता है।

आधुनिक संदर्भ

आज के मीडिया-युग में 'इमेज मैनेजमेंट' (प्रतिमा-प्रबंधन) का यह सबसे बड़ा सूत्र है। जिन नेताओं का परिवार या निकटतम वर्ग कुख्यात, भ्रष्ट या अत्याचारी होता है, वे जनता से कट जाते हैं। आधुनिक संगठनों में 'टीम कल्चर' या 'बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स' की प्रतिष्ठा सीधे कंपनी की ब्रांड-वैल्यू तय करती है।

श्लोक १२ (दुष्ट सचिवों से बचाव)

श्लोक
निरुन्धानाः सतां मार्गं भक्षयन्ति महीपतिम् । दुष्टात्मानस् तु सचिवास् अस्मात् सुसचिवो भवेत् ॥१२॥

IAST
nirundhānāḥ satāṃ mārgaṃ bhakṣayanti mahīpatim | duṣṭātmānas tu sacivās asmāt susacivo bhavet ||12||

शब्दार्थ
• **निरुन्धानाः** – रोकने वाले / अवरोध उत्पन्न करने वाले
• **सताम्** – सज्जनों / नेक-पुरुषों का
• **मार्गम्** – मार्ग / पहुँच
• **भक्षयन्ति** – भक्षण करते हैं / नष्ट कर डालते हैं
• **महीपतिम्** – राजा को
• **दुष्टात्मानः** – दुष्ट-आत्मा / नीच-प्रकृति के
• **तु** – ही
• **सचिवाः** – मंत्री / सलाहकार
• **अस्मात्** – इस कारण / इससे बचने के लिए
• **सुसचिवः** – अच्छे, सज्जन, योग्य मंत्री
• **भवेत्** – होना चाहिए।

भावार्थ
दुष्टात्मा (नीच प्रकृति के) सचिव, सबसे पहले सज्जन पुरुषों (विद्वान, ईमानदार, जनहितैषी) का राज-दरबार तक पहुँचने का मार्ग अवरुद्ध कर देते हैं—अर्थात वे राजा को सत्य एवं सही सलाह से वंचित करते हैं। फिर वे स्वयं राजा को ही 'भक्षण' कर लेते हैं, अर्थात् वे राजा की शक्ति, कोश, बुद्धि को अपने स्वार्थ के लिए चूस लेते हैं। इससे बचने के लिए राजा को 'सुसचिव' (सुयोग्य, सत्यवादी मंत्रियों) से युक्त होना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह 'सचिव-शक्ति के दुरुपयोग' (misuse of advisory power) पर गहन चिंतन है। दार्शनिक रूप से, यह 'माया' और 'अविद्या' (अज्ञान) का राजनीतिक स्वरूप है—दुष्ट मंत्री राजा को अज्ञान के आवरण में रखते हैं। सुकरात ने 'सोफिस्टों' को इसी श्रेणी में रखा था, जो सत्य को तोड़-मरोड़ कर नेताओं को मंत्रमुग्ध रखते थे।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक शासन-प्रणाली में 'सिविल सर्विस', 'कैबिनेट मंत्री' तथा 'निजी सलाहकार' इसी 'सचिव' के पद हैं। विश्व के अनेक संकट—जैसे वाटरगेट, इराक युद्ध में फर्जी खुफिया जानकारी—इसी 'दुष्टात्मा सचिवों' के कारण हुए। यही कारण है कि आधुनिक लोकतंत्रों में 'राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार', 'मुख्य सतर्कता अधिकारी' एवं 'स्वतंत्र मीडिया' पर बल दिया जाता है।

श्लोक १३ (सज्जनों के बिना विभूति व्यर्थ)

श्लोक
विभूतीः परमाः प्राप्य सतां सम्भोग्यताम् इयात् । यासु सन्तो न तिष्ठन्ति ता वृथैव विभूतयः ॥१३॥

IAST
vibhūtīḥ paramāḥ prāpya satāṃ sambhogyatām iyāt | yāsu santo na tiṣṭhanti tā vṛthaiva vibhūtayaḥ ||13||

शब्दार्थ
- **विभूतीः** – ऐश्वर्य / सम्पदाएँ
- **परमाः** – उत्कृष्ट / अत्युत्तम
- **प्राप्य** – प्राप्त करके
- **सताम्** – सज्जनों / विद्वानों / गुणियों की
- **सम्भोग्यताम्** – उपभोग करने की योग्यता / प्राप्ति
- **इयात्** – प्राप्त करे
- **यासु** – जिन (विभूतियों) में
- **सन्तः** – सज्जन / सद्गुणी
- **न तिष्ठन्ति** – नहीं रहते (प्रतिष्ठित नहीं होते)
- **ताः** – वे
- **वृथा** – व्यर्थ
- **एव** – ही
- **विभूतयः** – सम्पदाएँ।

भावार्थ
राजा चाहे कितनी ही परम ऐश्वर्य-सम्पदाएँ प्राप्त कर ले, किन्तु यदि वे सम्पदाएँ सज्जनों, विद्वानों एवं गुणियों के उपभोग एवं सहयोग को प्राप्त नहीं होतीं, तो वे पूर्णतः निरर्थक हैं। धन, पद, सत्ता का मूल्य उनके भौतिक अस्तित्व में नहीं, बल्कि उनके सदुपयोग एवं सत्पात्रों के साथ सम्बन्ध में निहित है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'सत्संगति' (सज्जनों का साथ) के सर्वोपरि सिद्धान्त को राजनीति पर लागू करता है। उपनिषदों में 'सत्यमेव जयते' और गीता में 'सत्संगत्वे निस्संगत्वम्' का व्यावहारिक रूप यहाँ है। प्लेटो ने भी 'फिलोसोफर किंग' में कहा कि धन तभी सार्थक है जब वह ज्ञान और सद्गुणों से युक्त हो।

आधुनिक संदर्भआधुनिक युग में यह 'सामाजिक उत्तरदायित्व' (CSR) और 'सतत विकास' (Sustainable Development) की अवधारणा से पूर्णतः मेल खाता है। कोई भी संगठन चाहे कितना भी GDP उत्पन्न कर ले, यदि उस विकास का लाभ विद्वानों, कृषकों, कारीगरों और नैतिक नेतृत्व (जिन्हें 'सन्तः' कहा गया) तक नहीं पहुँचता, तो वह विकास 'लम्पट पूँजीवाद' मात्र है।

श्लोक १४ (राजा के आठ व्यक्तित्व-गुण)

श्लोक
वाग्मी प्रगल्भः स्मृतिमान् उदग्रो बलवान् वशी । नेता दण्डस्य निपुणः कृतविद्यः सुविग्रहः ॥१४॥

IAST
vāgmī pragalbhaḥ smṛtimān udagro balavān vaśī | netā daṇḍasya nipuṇaḥ kṛtavidyaḥ suvigrahaḥ ||14||

शब्दार्थ
• **वाग्मी** – वाक्पटु (कुशल वक्ता)
• **प्रगल्भः** – साहसी / निर्भीक
• **स्मृतिमान्** – स्मरणशक्ति से युक्त
• **उदग्रः** – उत्साही / तीव्रोद्यमी
• **बलवान्** – शारीरिक/सैनिक बल से सम्पन्न
• **वशी** – संयमी / इन्द्रिय-विजयी
• **नेता** – नेतृत्वकर्ता / प्रमुख
• **दण्डस्य** – दण्ड-नीति / शासन-व्यवस्था का
• **निपुणः** – कुशल / निपुण
• **कृतविद्यः** – शिक्षित / विद्याप्राप्त
• **सुविग्रहः** – सुन्दर/सुदृढ़ शरीर वाला।

भावार्थ
राजा (स्वामी) के आठ प्रमुख व्यक्तित्व-गुण—वाक्पटुता, साहस, स्मृतिशक्ति, उत्साह, शारीरिक बल, आत्म-संयम, दण्ड-नीति में कुशलता, विद्या-प्राप्ति और सुदृढ़ शरीर—आवश्यक हैं। राजा को प्रजा के समक्ष अपनी बात रखने, शत्रुओं से टक्कर लेने, शास्त्र-ज्ञान को धारण करने, अवसर आने पर तीव्रता से कार्य करने, सेना को नेतृत्व देने, इन्द्रियों पर नियंत्रण रखने, अपराधियों को उचित दण्ड देने, विद्याओं का अध्ययन करने और शारीरिक रूप से स्वस्थ होने की आवश्यकता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'त्रिविध पुरुषार्थ'—धर्म, अर्थ, काम—के समन्वय का राजनीतिक दर्पण है। 'वाग्मी' एवं 'प्रगल्भ' सार्वजनिक-धर्म के लिए, 'बलवान' एवं 'दण्ड-नेता' अर्थ-रक्षा के लिए, 'वशी' एवं 'स्मृतिमान' अन्तःशुद्धि के लिए आवश्यक हैं। यह अरस्तू के

'पॉलिटिक्स' के 'अच्छे नागरिक' के गुणों से मेल खाता है। 'कृतविद्यः' बताता है कि जन्म से राजा नहीं बनता, वरन् शिक्षा एवं अभ्यास से बनता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबन्धन-शास्त्र (Management Science) इन्हीं गुणों को 'Leadership Competency Framework' कहता है। वाग्मीता (Communication Skills), प्रगल्भता (Risk-taking ability), स्मृतिमान (Data retention), उदग्रता (Passion), बलवान (Physical stamina), वशी (Emotional Intelligence), दण्ड-नेता (Crisis Management), कृतविद्य (Continuous Learning)—ये सभी आधुनिक CEO, Army Generals, या Prime Ministers के लिए अनिवार्य हैं।

श्लोक १५ (राजा की बाह्य-रक्षा एवं कूटनीतिक क्षमताएँ)

श्लोक
पराभियोगप्रसहः सर्वदृष्टप्रतिक्रियः । परच्छिद्रान्ववेक्षी च सन्धिविग्रहतत्त्ववित् ॥१५॥

IAST
parābhiyogaprasahaḥ sarvadṛṣṭapratikriyaḥ | paracchidrānvavekṣī ca sandhivigrahatattvavit ||15||

शब्दार्थ
- **पराभियोगप्रसहः** – शत्रुओं के आक्रमण को सहन करने वाला/सामना करने वाला
- **सर्वदृष्टप्रतिक्रियः** – सभी दृश्यमान स्थितियों में प्रतिकार करने वाला
- **परच्छिद्रान्ववेक्षी** – शत्रु के दोष/कमज़ोरी की खोज करने वाला
- **च** – और
- **सन्धिविग्रहतत्त्ववित्** – संधि (समझौता) और विग्रह (युद्ध) के तत्व को जानने वाला।

भावार्थ
राजा को शत्रु-राज्यों के आक्रमण को बिना विचलित हुए झेलने (प्रसहन) की शक्ति होनी चाहिए। उसे दिखने वाली प्रत्येक चुनौती पर त्वरित प्रतिक्रिया देनी आनी चाहिए। वह शत्रुओं के छिद्रों (कमज़ोरियों) की सतत् निगरानी करे, किन्तु केवल आक्रमणकारी न होकर 'सन्धि' (संधि/मैत्री) और 'विग्रह' (युद्ध) के वास्तविक तत्त्व को भी जाने—कब समझौता करना है और कब युद्ध करना है।

दार्शनिक विवेचन

यह कौटिल्यीय 'मण्डल-सिद्धान्त' (मित्र-शत्रु-उदासीन-मध्यस्थ) का विस्तार है। 'सन्धि-विग्रह' का विवेक भारतीय नीति-दर्शन का मूल है—'युद्धोपाय' के अन्तर्गत चार उपाय—साम, दाम, दण्ड, भेद—में से किसका चयन करना है, इसका निर्णय राजा देश-काल-पात्र को देखकर करता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक भू-राजनीति में यह 'नेशनल सिक्योरिटी डॉक्ट्रेन' का आधार है। 'पराभियोग-प्रसहन'—साइबर अटैक, आतंकवाद या सीमा-उल्लंघन को सहन करने की क्षमता; 'सर्वदृष्टप्रतिक्रिया'—आपातकालीन प्रतिक्रिया बल (Rapid Action Force); 'परच्छिद्रान्ववेक्षण'—इंटेलिजेंस ब्यूरो (RAW/CIA); 'सन्धि-विग्रह-तत्त्ववित्'—अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति (UN, बहुपक्षीय समझौते)।

श्लोक १६ (गुप्तनीति, देश-काल-विभाग एवं कर-व्यय-कुशलता)

श्लोक
गूढमन्त्रप्रचारश् च देशकालविभागविद् । आदाता सम्यग् अर्थानां विनियोक्ता च पात्रवित् ॥१६॥

IAST
gūḍhamantrapracāraś ca deśakālavibhāgavid | ādātā samyag arthānāṃ viniyoktā ca pātravit ||16||

शब्दार्थ
- **गूढमन्त्रप्रचारः** – गुप्त मंत्र-योजनाओं का प्रचार/संचालन करने वाला (रहस्य रखने वाला)
- **च** – और
- **देशकालविभागवित्** – देश (स्थान) और काल (समय) के विभाजन/उपयोग को जानने वाला
- **आदाता** – ग्रहण करने वाला (कर/राजस्व लेने वाला)
- **सम्यक्** – उचित रूप से / न्यायपूर्वक
- **अर्थानाम्** – धन-सम्पत्तियों का
- **विनियोक्ता** – खर्च करने वाला / विनियोग करने वाला
- **च** – और
- **पात्रवित्** – पात्र (योग्य व्यक्ति/स्थान) को जानने वाला।

भावार्थ
राजा को गुप्त नीतियों एवं मंत्रणाओं को गोपनीय रखने की कला आनी चाहिए। वह 'देश' (भौगोलिक स्थिति) और 'काल' (समय, ऋतु, अवसर) के विभाजन को समझता हो। कर-संग्रह (आदान) में वह 'सम्यक्' (न्यायसंगत) हो, और धन-व्यय (विनियोग) में 'पात्रवित्'—अर्थात् वह जानता है कि किस योग्य व्यक्ति, विभाग या कार्य पर धन खर्च करना उचित है। यह राजकोषीय अनुशासन एवं रणनीतिक गोपनीयता का अद्भुत संगम है।

दार्शनिक विवेचन

'गूढमन्त्र' का सिद्धान्त 'रहस्य-विद्या' (Esoteric Knowledge) से जुड़ा है—यह 'गुह्य-विद्या' परम्परा है। 'देश-काल-विभाग' सांख्य-दर्शन के 'त्रिगुण' एवं 'परिणाम' सिद्धान्त का व्यावहारिक रूप है। 'सम्यगादान' मनुस्मृति के 'षष्ठांश' (छठा भाग) सिद्धान्त से मेल खाता है—कर प्रजा की क्षमता के अनुसार हो। 'पात्र-विनियोग' न्याय-दर्शन की 'पात्रता' अवधारणा है—अयोग्य पर दिया गया धन 'पाप' है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सरकारों के लिए 'गूढमन्त्र' 'क्लासिफाइड डॉक्युमेंट्स' है। 'देश-काल-विभाग'—क्षेत्रीय योजना एवं आपदा-प्रबंधन। 'सम्यगादान'—कर-संरचना (GST, प्रगतिशील कर)। 'पात्रवित्'—बजट आवंटन में योग्यता-आधारित योजनाएँ। विश्व बैंक भी 'कर-पारदर्शिता' और 'लक्षित व्यय' पर बल देता है।

श्लोक १७ (राजा के आन्तरिक शत्रुओं से मुक्ति)

श्लोक
क्रोधलोभभयद्रोहस्तम्भचापलवर्जितः । परोपतापपैशुन्यमात्सर्येर्ष्यानृतातिगः ॥१७॥

IAST
krodhalobhabhayadrohastambhacāpalavarjitaḥ | paropatāpaśaunyamātsaryerṣyānṛtātigaḥ ||17||

शब्दार्थ
- **क्रोध** – क्रोध
- **लोभ** – लालच
- **भय** – भय / आतंक
- **द्रोह** – विश्वासघात / वैर-भाव
- **स्तम्भ** – अहंकार / हठ / जड़ता
- **चापल** – चंचलता / उतावलापन
- **वर्जितः** – रहित / त्यागा हुआ
- **परोपताप** – दूसरों को पीड़ा देना
- **पैशुन्य** – चुगली / कलह-प्रियता
- **मात्सर्य** – द्वेष / जलन
- **ईर्ष्या** – ईर्ष्या
- **अनृत** – असत्य / झूठ
- **अतिगः** – अतीत (से ऊपर उठा हुआ)।

भावार्थ
राजा क्रोध, लोभ, भय, द्रोह-भाव, अहंकार (स्तम्भ) और चपलता से सर्वथा रहित हो। साथ ही, वह दूसरों को कष्ट देने (परोपताप), चुगली करने (पैशुन्य), जलन (मात्सर्य), ईर्ष्या और असत्य (अनृत) से भी परे हो। क्रोध से अत्याचार, लोभ से भ्रष्टाचार, भय से कायरता, द्रोह से अविश्वास, स्तम्भ से निरंकुशता और चापल्य से असंगत नीतियाँ बनती हैं। वास्तविक शासक इन सबसे विपरीत, शान्त, संतुलित, निर्भीक एवं सत्यवादी होता है।

दार्शनिक विवेचन

यह भगवद्गीता (१६.२१) के 'त्रिविध द्वारं नरकस्य' (काम, क्रोध, लोभ) एवं पातञ्जल-योगसूत्र के 'अन्तराय' का राजनीतिक संस्करण है। 'क्रोध' रजोगुण, 'लोभ' तमोगुण और 'स्तम्भ' अहंकार (अस्मिता) है—ये सभी बन्धन हैं। बौद्ध दर्शन के 'दशकुशल' (दस अकुशल कर्मों में परोपताप, पैशुन्य, ईर्ष्या, अनृत सम्मिलित हैं) से भी यह मेल खाता है। यह स्टोइक दर्शन (Stoicism) के 'apatheia' (विकारों से मुक्ति) के समान है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक मनोविज्ञान इन दोषों को 'Toxic Leadership Traits' कहता है। क्रोध—असभ्य राजनेता; लोभ—भ्रष्टाचार (पनामा पेपर्स); भय—तानाशाही में चुप्पी; स्तम्भ—जनता की सुनवाई न करना; चापल्य—नीति में उतार-चढ़ाव (ब्रेग्जिट)। 'परोपताप'—युद्धों में नागरिक-हत्या; 'अनृत'—चुनावी वादे तोड़ना। बिना आन्तरिक शुद्धि के सार्वजनिक नीति कभी पवित्र नहीं हो सकती।

श्लोक १८ (राजा की आत्म-सम्पदा / चरित्र-गुण)

श्लोक
वृद्धोपदेशसम्पन्नः श्लक्ष्णो मधुरदर्शनः । गुणानुरागी मितवाग् आत्मसम्पत्प्रकीर्तिता ॥१८॥

IAST

vṛddhopadeśasampannaḥ ślakṣṇo madhuradarśanaḥ | guṇānurāgī mitavāg ātmasampatprakīrtitā ||18||

शब्दार्थ

- **वृद्धोपदेशसम्पन्नः** – बुजुर्गों/अनुभवियों के उपदेश से सम्पन्न
- **श्लक्ष्णः** – सुशील / कोमल / विनम्र
- **मधुरदर्शनः** – देखने में मधुर (सौम्य एवं आकर्षक मुखमुद्रा)
- **गुणानुरागी** – गुणों में अनुराग रखने वाला (सद्गुणों का प्रेमी)
- **मितवाक्** – मितभाषी / कम बोलने वाला (संयत वाणी)
- **आत्मसम्पत्** – यह (उक्त सभी गुण) आत्मा की सम्पदा है
- **प्रकीर्तिता** – कही गई / वर्णित की गई।

भावार्थ

राजा को अनुभवी वृद्धों, मन्त्रियों एवं विद्वानों के उपदेशों से सुसज्जित होना चाहिए। वह 'श्लक्ष्ण' (कोमल, विनम्र) हो—रूखा-सूखा, अहंकारी नहीं। उसका 'दर्शन' (व्यवहार) 'मधुर' हो, जिससे प्रजा आकर्षित हो। वह 'गुणानुरागी' हो—धन या पद से नहीं, बल्कि सद्गुणों (शौर्य, विद्या, दान, न्याय) से प्रेम करता है। वह 'मितवाक्' हो—उसके शब्द तौले हुए एवं सत्य होते हैं। कामन्दक इन सभी गुणों को 'आत्मसम्पत्' (आत्मिक सम्पदा) कहते हैं—यह बाहरी कोश (धन) से अधिक मूल्यवान है।

दार्शनिक विवेचन

'वृद्धोपदेश' 'श्रुति-स्मृति' एवं 'परम्परागत-ज्ञान' का प्रतीक है। 'श्लक्ष्ण' एवं 'मधुरदर्शन' 'सात्विक-व्यक्तित्व' का लक्षण है—जैसा गीता में 'प्रसन्नात्मा' कहा गया है। 'मितवाक्'—यह 'मौन-दर्शन' एवं सोफोकल्स की 'वाणी-संयम' अवधारणा से मेल खाता है। 'आत्मसम्पत्' शब्द दर्शाता है कि ये गुण बाह्य उपाधियाँ नहीं, अपितु 'आत्मा' (चेतना, स्वभाव) के संस्कार हैं। सुकरात ने भी 'आत्मा की देखभाल' को राजनीति का आधार बताया।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक नेतृत्व प्रशिक्षण में 'मेंटरशिप' (वृद्धोपदेश), 'इमोशनल इंटेलिजेंस' (श्लक्ष्णता), 'एथिकल फ्रेमवर्क' (गुणानुराग) और 'संयमित संचार' (मितवाक्) को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। जैक मा, रतन टाटा, सत्य नडेला विनम्रता एवं मृदुभाषिता के लिए जाने जाते हैं। 'मितवाक्'—सोशल मीडिया के युग में हर नेता को संयत वाणी का पालन करना चाहिए; एक ट्वीट देश-दुनिया बदल सकता है।

श्लोक १९ (गुणी राजा में प्रजा का पितृ-तुल्य सुख)

श्लोक

इत्यादिगुणसम्पन्ने लोकयात्राविदि स्थिरे । निर्वृतः पितरीवास्ते यत्र लोकः स पार्थिवः ॥१९॥

IAST

ityādiguṇasampanne lokayātrāvidi sthire | nirvṛtaḥ pitarīvāste yatra lokaḥ sa pārthivaḥ ||19||

शब्दार्थ

- **इत्यादि** – इस प्रकार (ऊपर वर्णित)
- **गुणसम्पन्ने** – गुणों से सम्पन्न (राजा में)

- **लोकयात्राविदि** – लोक-व्यवहार / सांसारिक कार्य-प्रणाली जानने वाले
- **स्थिरे** – स्थिर बुद्धि / अडिग
- **निर्वृतः** – आनन्दित / सुखी
- **पितरीव** – पिता के समान
- **आस्ते** – रहता है / निवास करता है
- **यत्र** – जहाँ
- **लोकः** – प्रजा / जनता
- **सः** – वह
- **पार्थिवः** – राजा / क्षितिपाल।

भावार्थ
जो राजा उपर्युक्त (१३-१८) वर्णित सभी गुणों से सम्पन्न होता है, तथा 'लोकयात्रा' (संसार की गति, प्रजा की आवश्यकताएँ) को जानने वाला एवं 'स्थिर' (दृढ़निश्चयी) होता है, उस राज्य में प्रजा अपने पिता के समान (निर्वृत्त/सुखपूर्वक) निवास करती है। 'पितृ-उपमा' अत्यन्त मार्मिक है—जिस प्रकार पिता अपनी सन्तान का पालन-पोषण, सुरक्षा एवं मार्गदर्शन निःस्वार्थ भाव से करता है, उसी प्रकार यह राजा प्रजा के साथ व्यवहार करता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'राज-पितृ' अवधारणा है, जो मनुस्मृति (७.२) के 'राजा प्रजानां पिता' के समान है। 'लोकयात्रावित्'—राजा को 'प्रत्यक्ष-व्यवहार' एवं 'लोक-व्यवहार' का ज्ञान हो—यह अरस्तू के 'प्रैक्टिकल विजडम' (Phronesis) के तुल्य है। 'स्थिर'—राजा 'स्थिरप्रज्ञ' (गीता २.५७) हो, जिसे सुख-दुःख, जय-पराजय में समभाव हो। 'निर्वृतः'—प्रजा का आनन्द ही राजा की सफलता है, यह उपनिषदों की 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की प्रतिध्वनि है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में शासक को 'सेवक' (Public Servant) कहा जाता है, किन्तु 'सेवा-भाव' ही इस 'पितृत्व' का आधुनिक स्वरूप है। 'लोकयात्राविद्'—जनता की आकांक्षाओं को समझना एवं 'स्टेट्समैनशिप'। 'स्थिर'—संकटकाल में (महामारी, युद्ध) स्थिर नेतृत्व ही विश्वास दिलाता है। विकसित देशों के 'वेलफेयर स्टेट' (कल्याणकारी राज्य) की अवधारणा इसी पर खड़ी है—जहाँ सरकार पिता की भाँति बचपन (शिक्षा), युवावस्था (रोजगार) एवं वृद्धावस्था (पेंशन) का ध्यान रखती है।

श्लोक २० (गुणी राजा को पाकर प्रजा की समृद्धि)

श्लोक
आत्मसम्पद्गुणैः सम्यक् संयुक्तं युक्तकारिणम् । महेन्द्रम् इव राजानं प्राप्य लोको विवर्धते ॥२०॥

IAST
ātmasampadguṇaiḥ samyak saṃyuktaṃ yuktakāriṇam | mahendram iva rājānaṃ prāpya loko vardhate ||20||

शब्दार्थ
- **आत्मसम्पद्गुणैः** – आत्म-सम्पदा (श्लोक १८ में वर्णित) के गुणों से
- **सम्यक्** – पूर्णतया / यथोचित
- **संयुक्तम्** – युक्त / सम्पन्न

• **युक्तकारिणम्** – उचित/समयानुसार कार्य करने वाला
• **महेन्द्रम्** – इन्द्र (देवराज) के समान
• **इव** – सदृश
• **राजानम्** – राजा को
• **प्राप्य** – पाकर / प्राप्त करके
• **लोकः** – प्रजा / जनता
• **विवर्धते** – उन्नत/समृद्ध होती है (बढ़ती है)।

भावार्थ
आत्म-सम्पदा (व्यक्तित्व-गुण) से पूर्णतया युक्त तथा 'युक्तकारी' (अर्थात् देश-काल-पात्रानुसार उचित कर्म करने वाला) राजा की उपमा 'महेन्द्र' (इन्द्र) से दी है—जिस प्रकार देवता इन्द्र को पाकर त्रिलोक समृद्ध होता है, उसी प्रकार इस गुण-सम्पन्न राजा को पाकर प्रजा अभिवृद्धि को प्राप्त होती है। 'विवर्धते'—प्रजा केवल जीवित नहीं रहती, अपितु सर्वांगीण रूप से विकसित होती है—उसका ज्ञान, धन, स्वास्थ्य, नैतिकता एवं सुख—सब बढ़ता है। राजा का अस्तित्व स्वयं के लिए नहीं, अपितु प्रजा-विकास के लिए है।

दार्शनिक विवेचन

'महेन्द्र' की उपमा अत्यन्त महत्वपूर्ण है—इन्द्र वैदिक देवताओं के राजा हैं, जो 'प्रजापति' भी कहलाते हैं। ऋग्वेद में इन्द्र को 'वृत्रहा' (विघ्नों का नाशक) एवं 'पुरंदर' (दुर्गों को तोड़ने वाला) कहा गया है—यही गुण आदर्श राजा में होने चाहिए। 'युक्तकारी'—यह 'युक्त' शब्द अध्यात्म-दर्शन का है, जिसका अर्थ है 'संयत' एवं 'कर्म-योगी'—जो गीता के 'योगस्थः कुरु कर्माणि' का स्मरण दिलाता है। प्लेटो के 'रिपब्लिक' में 'नोस्टोस' (सामूहिक विकास) की चर्चा है, तथा यहाँ 'लोकः' का 'विवर्धन' 'अभ्युदय' (उत्कर्ष) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक अर्थशास्त्र एवं राजनीति में 'लोको विवर्धते' का सीधा अनुवाद 'आर्थिक विकास' (Economic Growth) एवं 'मानव-विकास' (Human Development) है। जिस देश में दूरदर्शी, योग्य एवं चरित्रवान नेतृत्व होता है, वहाँ GDP बढ़ती है, गरीबी घटती है, शिक्षा-स्वास्थ्य सुधरता है—जैसे सिंगापुर (ली कुआन यू), दक्षिण कोरिया। 'महेन्द्र' की उपमा आज के 'विज़नरी लीडर' के लिए उपयुक्त है—जो न केवल शासन करता है, बल्कि राष्ट्र का निर्माण (नेशन-बिल्डिंग) करता है। विश्व बैंक एवं IMF के अध्ययन बताते हैं कि 'शासन-गुणवत्ता' का सीधा सम्बन्ध विकास दर से है।

श्लोक २१ (बुद्धि के सात गुण)

श्लोक
शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा । ऊहापोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः ॥२१॥

IAST
śuśrūṣā śravaṇaṃ caiva grahaṇaṃ dhāraṇaṃ tathā | ūhāpoho'rthavijñānaṃ tattvajñānaṃ ca dhīguṇāḥ ||21||

शब्दार्थ
• **शुश्रूषा** – सुनने की उत्कट इच्छा / जिज्ञासा
• **श्रवणम्** – ध्यानपूर्वक सुनना
• **ग्रहणम्** – सुने हुए को ग्रहण करना / समझना

• **धारणम्** – उसे स्मरण रखना
• **ऊहापोहः** – तर्क-वितर्क / युक्ति-विपरीत युक्ति
• **अर्थविज्ञानम्** – अभिप्राय का गहन बोध
• **तत्त्वज्ञानम्** – वस्तु-स्वरूप का यथार्थ ज्ञान
• **धीगुणाः** – बुद्धि (धी) के गुण कहे गए हैं।

भावार्थ
राजा की बौद्धिक क्षमता के सात क्रमिक गुण हैं—(१) शास्त्रों को सुनने की जिज्ञासा (शुश्रूषा), (२) एकाग्रतापूर्वक सुनना (श्रवण), (३) हृदयंगम करना (ग्रहण), (४) स्मृति में सुरक्षित रखना (धारण), (५) विषय पर तर्क-विमर्श करना (ऊहापोह), (६) गूढ़ अर्थ को जानना (अर्थविज्ञान), और (७) मूल तत्त्व/सत्य तक पहुँचना (तत्त्वज्ञान)। ये सातों एक श्रृंखला हैं—बिना पहले के अगला संभव नहीं। ऐसी बुद्धि से युक्त राजा ही नीतियों का सूक्ष्म मूल्यांकन कर सकता है।

दार्शनिक विवेचन यह क्रम उपनिषदों के 'श्रवण-मनन-निदिध्यासन' तथा पतंजलि योगसूत्र के 'धारणा-ध्यान-समाधि' से मेल खाता है। 'शुश्रूषा' जिज्ञासा-मूलक आद्याप्रज्ञा है; गौतम न्यायसूत्र में 'संशय' (जिज्ञासा) को प्रमाण-प्रवृत्ति का प्रथम क्षण माना है। 'ऊहापोह' न्याय-वैशेषिक की 'तर्क' पद्धति है—यह हेगेल की डायलेक्टिक (थीसिस-एंटीथीसिस-सिन्थेसिस) से सदृश है। 'तत्त्वज्ञान' अद्वैत वेदान्त का अन्तिम लक्ष्य है—यहाँ राज-नीति में भी इसी परम-तत्त्वदृष्टि की आवश्यकता बताई गई है।

आधुनिक संदर्भ आधुनिक शिक्षा-मनोविज्ञान (Bloom's Taxonomy) का Remembering, Understanding, Applying, Analyzing, Evaluating, Creating का स्तर-बद्ध क्रम इसी का प्राचीन संस्करण है। 'शुश्रूषा' से सीखने की प्रेरणा, 'श्रवण-ग्रहण-धारण' (संज्ञानात्मक अधिग्रहण), 'ऊहापोह' (आलोचनात्मक विश्लेषण), 'अर्थविज्ञान' (संदर्भगत बोध) और 'तत्त्वज्ञान' (मूल-सत्य का संश्लेषण) आधुनिक डेटा-साइंस, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और स्ट्रैटेजिक मैनेजमेंट की आधारभूत प्रक्रियाएँ हैं।

श्लोक २२ (उत्साह के लक्षण)

श्लोक
दाक्ष्यं शैघ्र्यं तथामर्षः शौर्यं चोत्साहलक्षणम् । गुणैर् एतैर् उपेतः सन् राजा भवितुम् अर्हति ॥२२॥

IAST
dākṣyaṃ śaighryaṃ tathāmarṣaḥ śauryaṃ cot'sāhalakṣaṇam | guṇair etair upetaḥ san rājā bhavitum arhati ||22||

शब्दार्थ
• **दाक्ष्यम्** – कार्य-कौशल / निपुणता
• **शैघ्र्यम्** – शीघ्रता / तत्परता
• **अमर्षः** – अपमान/अन्याय को सहन न करने का भाव / प्रतिघात-शक्ति
• **शौर्यम्** – वीरता / पराक्रम
• **उत्साहलक्षणम्** – उत्साह के चिह्न / लक्षण
• **गुणैः एतैः** – इन गुणों से
• **उपेतः** – युक्त
• **राजा** – राजा
• **भवितुम् अर्हति** – होने योग्य है।

भावार्थ
राजा के उत्साह (ऊर्जा, जोश और स्फूर्ति) के चार स्पष्ट लक्षण हैं—दाक्ष्य (किसी भी कार्य को कुशलतापूर्वक करने की योग्यता), शैघ्र्य (योजना को बिना विलम्ब क्रियान्वित करना), अमर्ष (अन्याय, अधर्म या शत्रु के अत्याचार को सहन न करना), और शौर्य (युद्ध-क्षेत्र एवं कठिन परिस्थितियों में अटूट वीरता)। केवल धी-बुद्धि पर्याप्त नहीं; उसमें क्रियाशीलता की अग्नि (उत्साह) होनी चाहिए। जिस राजा में ये गुण नहीं, वह कोरी योजना बना कर ही रह जाता है।

दार्शनिक विवेचन

'उत्साह' को भारतीय दर्शन में 'रजोगुण' की प्रधानता माना जाता है, किन्तु यहाँ यह 'सत्त्व' के अनुशासन में बँधा हुआ है। गीता (१८.२६) में 'मुक्तसङ्गोऽनहंवादी... उत्साही'—उत्साह को कर्मयोगी का प्रमुख लक्षण बताया गया है। दाक्ष्य 'अपरोक्ष-अनुभव' है, शैघ्र्य 'काल-बोध' है, अमर्ष 'क्षत्रिय-धर्म' (प्रतिहार) का प्रतीक है, और शौर्य आत्म-बल का बाह्य प्रसार है। शंकराचार्य ने 'उत्साह' को मोक्ष-साधन में 'आत्म-शक्ति' कहा है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक व्यवस्थापन में इसे उद्यमशीलता (Entrepreneurship) कहते हैं। 'दाक्ष्य' = कम्पिटेन्सी, 'शैघ्र्य' = एजिलिटी (चपलता), 'अमर्ष' = शून्य-सहनशीलता (Zero-tolerance for injustice), और 'शौर्य' = जोखिम उठाने का साहस (Risk-taking ability)। विश्व-स्तर पर सफल नेता—नेपोलियन, चर्चिल, या आधुनिक स्टार्ट-अप संस्थापक—इन चारों गुणों से युक्त होते हैं। आज वैश्विक प्रतिस्पर्धा में विलम्ब (शैघ्र्य-हीनता) देश को प्रतिस्पर्धा से बाहर कर देता है।

श्लोक २३ (तीन महागुण)

श्लोक
त्यागः सत्यं च शौर्यं च त्रय एते महागुणाः । प्राप्नोति हि गुणान् सर्वान् एतैर् युक्तो महीपतिः ॥२३॥

IAST
tyāgaḥ satyaṃ ca śauryaṃ ca traya ete mahāguṇāḥ | prāpnoti hi guṇān sarvān etair yukto mahīpatiḥ ||23||

शब्दार्थ
• **त्यागः** – दान-स्वभाव / आसक्ति-रहितता / बलिदान-भावना
• **सत्यम्** – सत्यवादिता / सत्य-निष्ठा
• **शौर्यम्** – वीरता / पराक्रम
• **त्रयः एते** – ये तीन
• **महागुणाः** – महान गुण
• **प्राप्नोति** – प्राप्त कर लेता है
• **सर्वान्** – समस्त
• **एतैः युक्तः** – इनसे युक्त
• **महीपतिः** – राजा।

भावार्थ
राजा के तीन सर्वोच्च मूल गुण—त्याग, सत्य और शौर्य—हैं। त्याग (उदारता, परार्थ-बुद्धि) राजा को लोकप्रिय बनाता है; सत्य (अचल सत्य-निष्ठा) उसके वचन को संविधान-तुल्य प्रतिष्ठा देता है; शौर्य (अभय एवं युद्ध-कौशल) शत्रुओं को दबा कर रखता है। इन तीनों से युक्त राजा अपने आप ही शेष समस्त गुणों (नीति-कौशल, बुद्धि, विनय आदि) को स्वतः प्राप्त

कर लेता है। उदारता के बिना कोश-बल निर्बल, सत्य के बिना संधि-विग्रह विश्वसनीय नहीं, और शौर्य के बिना दुर्ग-बल अर्थहीन।

दार्शनिक विवेचन

ये तीन गुण त्रिवर्ग (धर्म-अर्थ-काम) के नैतिक आधार हैं। त्याग = 'अर्थ' पर विजय, सत्य = 'धर्म' की रीढ़, शौर्य = 'काम' (वीररस) का उच्चतम स्वरूप। गीता में भी 'त्याग' (१८.५), 'सत्य' (१७.१४) और 'शौर्य' (१६.१-३) को दैवी सम्पदा माना गया है। मनुस्मृति में राजा को 'सत्य-प्रतिज्ञ' कहा गया। न्याय-दर्शन के 'आप्तोपदेश' (विश्वसनीय वचन) में सत्य ही प्रमाण है। ये तीन एक त्रिपदी हैं—एक की कमी राजा को अधूरा बनाती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक शासन-प्रणाली में इन्हें सुशासन के तीन स्तम्भ कह सकते हैं—त्याग = सार्वजनिक-हित के लिए स्वार्थ-त्याग (Public Service Ethos), सत्य = पारदर्शिता एवं जवाबदेही (Transparency & Accountability), शौर्य = दृढ़-निर्णय-क्षमता एवं राष्ट्र-रक्षा (Decisiveness & National Security)। विश्व-स्तर पर 'करप्शन परसेप्शन इंडेक्स' एवं 'ग्लोबल पीस इंडेक्स' में सत्य-निष्ठा और शौर्य को ही मापा जाता है। बिना त्याग का सत्य कठोर, बिना सत्य का शौर्य आतंक, और बिना शौर्य का त्याग नपुंसकता है।

श्लोक २४ (मंत्रियों के गुण)

श्लोक
कुलीनाः शुचयः शूराः श्रुतवन्तोऽनुरागिणः । दण्डनीतेः प्रयोक्तारः सचिवाः स्युर् महीपतेः ॥२४॥

IAST
kulīnāḥ śucayaḥ śūrāḥ śrutavanto'nurāgiṇaḥ | daṇḍanīteḥ prayoktāraḥ sacivāḥ syur mahīpateḥ ||24||

शब्दार्थ
• **कुलीनाः** – कुलीन / उच्च कुलोत्पन्न
• **शुचयः** – पवित्र / ईमानदार / शुद्ध चरित्र
• **शूराः** – वीर / साहसी
• **श्रुतवन्तः** – विद्वान / शास्त्रज्ञ
• **अनुरागिणः** – राज-भक्ति एवं प्रजा-अनुराग से युक्त
• **दण्डनीतेः** – दण्ड-नीति (राज्य-प्रशासन एवं दण्ड-विधान) के
• **प्रयोक्तारः** – प्रयोग करने वाले / व्यवहार-कुशल
• **सचिवाः** – मंत्री
• **स्युः** – हों
• **महीपतेः** – राजा के।

भावार्थ
राजा के सचिव (मंत्री) छह आवश्यक गुणों से युक्त होने चाहिए—(१) कुलीन (सुसंस्कारित परिवार में जन्मे), (२) शुचि (चारित्रिक एवं आर्थिक रूप से स्वच्छ), (३) शूर (आपत्ति एवं युद्ध में निर्भीक), (४) श्रुतवन्त (शास्त्र-ज्ञानी), (५) अनुरागी (राजा एवं राज्य-हित के प्रति प्रेम-भाव), तथा (६) दण्डनीति-प्रयोक्ता (दण्ड-व्यवस्था, कर-नीति में प्रयोग-कुशल)। ऐसे मंत्री ही राजा के सच्चे सहायक होते हैं।

दार्शनिक विवेचन

ये गुण सांख्य-पुरुषार्थों का सम्मिश्रण हैं। 'कुलीनता' का तात्पर्य 'संस्कार-परम्परा' है—जो 'शब्द-प्रमाण' (आप्त-परंपरा) की निष्पत्ति है। 'शुचित्व' राजसत्ता में नैतिक-दार्शनिक मूल्य का प्रतीक है, जो प्लेटो के 'फिलॉसफर-किंग' के मित्र-वर्ग से मेल खाता है। 'अनुराग' भक्ति-भावना का राजनीतिक रूप है। 'दण्डनीति' का 'प्रयोक्ता' होना मीमांसा के 'विधि-निषेध' को व्यवहार में उतारना है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक लोकप्रशासन में इसे सिविल सर्विस के आदर्श गुण कहते हैं। 'कुलीन' = संस्थागत अनुभव, 'शुचि' = अखंडनीय सत्यनिष्ठा (Integrity), 'शूर' = संकट-प्रबंधन क्षमता, 'श्रुतवन्त' = उच्चतर शिक्षा, 'अनुरागी' = संगठनात्मक वफादारी, 'दण्डनीति-प्रयोक्ता' = प्रशासनिक एवं विधिक-ज्ञान का व्यावहारिक अनुप्रयोग। आज IAS, IPS या विदेश-सेवा के चयन में यही गुण परखे जाते हैं। वर्तमान 'सुशासन' (Good Governance) में इन्हें 'क्षमता, नैतिकता एवं समर्पण' (Capacity, Integrity, Dedication) के रूप में परिभाषित किया गया है।

श्लोक २५ (उपधा-परीक्षण एवं परस्पर अनुशासन)

श्लोक
उपधाशोधिताः सम्यग् ईहमानाः फलोदयम् । तेऽस्य सर्वं परीक्षेरन् सानुरागाः कृताकृतम् ॥२५॥

IAST
upadhāśodhitāḥ samyag īhamānāḥ phalodayam | te'sya sarvaṃ parīkṣeran sānurāgāḥ kṛtākṛtam ||25||

शब्दार्थ
- **उपधाशोधिताः** – उपधा (गुप्त-परीक्षा) से परिष्कृत/शुद्ध किए गए
- **सम्यक्** – भली-भाँति
- **ईहमानाः** – इच्छा / प्रयत्न करते हुए
- **फलोदयम्** – फल के उत्पन्न होने की
- **ते** – वे (मंत्री)
- **अस्य** – इस (राजा) के
- **सर्वम्** – समस्त
- **परीक्षेरन्** – परीक्षा करें
- **सानुरागाः** – स्नेहयुक्त होकर
- **कृताकृतम्** – किए हुए (कृत) और न किए हुए (अकृत) कार्यों की।

भावार्थ
जो मंत्री उपधा (धर्म, अर्थ, काम, भय—चार कसौटियों) द्वारा शुद्ध किए जा चुके हों, जो सदा फलोत्पत्ति का ध्यान रखते हों, वे स्नेह-भाव से युक्त होकर राजा के सभी कार्यों (नीतियों, योजनाओं, व्यय, युद्ध, संधि) की पूरी परीक्षा करें—चाहे वे किए गए हों या विचाराधीन हों। मंत्री न केवल राजा के आदेश-पालक हैं, बल्कि राजा के कार्यों के निरीक्षक एवं आलोचक भी हैं। जाँच कठोर हो, किन्तु स्नेह एवं हित-इच्छा से हो।

दार्शनिक विवेचन

यह 'परस्पर चेक-एण्ड-बैलेंस' (पारस्परिक नियंत्रण) का दार्शनिक आधार है। राजा मंत्रियों की परीक्षा करता है, और मंत्री राजा के 'कृताकृत' (कर्मों) की परीक्षा करते हैं—यह 'अन्योन्याश्रय' सिद्धांत है, जो न्याय-वैशेषिक की 'समवाय' अवधारणा

को राजनीति में लागू करता है। 'फलोदय' का चिंतन मीमांसा के 'अभ्युदय' एवं 'निःश्रेयस' के सम्मिश्रण को दर्शाता है। 'सानुरागपरीक्षा'—निरीक्षण में 'अद्वैत-भावना'—जैसे आत्मा शरीर के अंगों की जाँच करती है, वैसे ही मंत्री राज्य-तंत्र की जाँच करें।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक लोकतंत्र में इसे परस्पर संस्थागत नियंत्रण (Institutional Checks and Balances) कहते हैं—न्यायपालिका, लोकपाल, नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (CAG) एवं संसदीय समितियाँ इसी भूमिका में हैं। 'उपधा-शोधित' मंत्री = 'स्क्रूटिनी कमेटी' के सदस्य। 'सानुराग' होना आज 'कंस्ट्रक्टिव क्रिटिसिज्म' (रचनात्मक आलोचना) है। निजी क्षेत्र में 'बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स' CEO के निर्णयों की समीक्षा करता है—यही 'कृताकृत-परीक्षा' है।

श्लोक २६ (उपधा की परिभाषा)

श्लोक
उपेत्य धीयते यस्माद् उपधेति ततः स्मृता । उपाय उपधा ज्ञेया तयामात्यान् परीक्षयेत् ॥२६॥

IAST
upetya dhīyate yasmād upadheti tataḥ smṛtā | upāya upadhā jñeyā tayāmātyān parīkṣayet ||26||

शब्दार्थ
• **उपेत्य** – निकट जाकर / समीप आकर
• **धीयते** – परीक्षा की जाती है
• **यस्मात्** – जिससे
• **उपधा** – उपधा (नाम)
• **इति ततः** – इसलिए
• **स्मृता** – (वह) कही गई
• **उपायः** – साधन / युक्ति
• **उपधा** – वह गुप्त-परीक्षा ही
• **ज्ञेया** – जानी जानी चाहिए
• **तया** – उस (उपधा) से
• **अमात्यान्** – मंत्रियों की
• **परीक्षयेत्** – राजा परीक्षा करे।

भावार्थ
'उपधा' शब्द की व्युत्पत्ति—जिस साधन के द्वारा राजा अपने मंत्रियों के निकट जाकर (उपेत्य) उनके चरित्र, वफादारी, ईमानदारी एवं आत्म-संयम को धीयते (धारण/परीक्षित) करता है, वह 'उपधा' कहलाती है। यह परीक्षा चार प्रकार की होती है—धर्म-उपधा (धर्म के नाम पर), अर्थ-उपधा (धन-लोभ से), काम-उपधा (भोग-विलास के प्रलोभन से), और भय-उपधा (भय दिखाकर)। ये सभी मानव-चित्त को विचलित करने वाले मूल मोह हैं। राजा को इन चार कसौटियों पर मंत्री को परखना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह भारतीय नीतिशास्त्र की अन्वीक्षिकी (परीक्षण-दर्शन) का प्रमाण है। 'उपधा' को 'उपाय' कहना दर्शाता है कि यह एक व्यावहारिक प्रमाण-साधन है। चार उपधाएँ चार 'पुरुषार्थों' (धर्म, अर्थ, काम) के आधार पर हैं—भय 'मोक्ष/अधर्म' का

प्रतीक है। मनुस्मृति (७.१०६-१०९) एवं अर्थशास्त्र (१.१०.४-११) में भी यही विधान है। यह 'अभ्यास' (प्रैक्सिस) है—मनुष्य का वास्तविक स्वभाव उसके संकट या प्रलोभन में ही प्रकट होता है, जैसे सोने की परीक्षा कसौटी पर होती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक भर्ती-प्रक्रिया एवं संगठनात्मक व्यवहार में इसे 'स्ट्रेस टेस्ट', 'इंटीग्रिटी टेस्ट' या 'सायकोमेट्रिक परीक्षण' कहते हैं। कॉर्पोरेट जगत में 'हनी-ट्रैप' (काम-उपधा), 'रिश्वत परीक्षण' (अर्थ-उपधा), 'अनैतिक कार्य-आदेश' (धर्म-उपधा), और 'नौकरी जाने का भय' (भय-उपधा) का प्रयोग गुप्त-जाँच में होता है। वर्तमान समय में 'लोकपाल', 'सीबीआई' या 'ईडी' की जाँचों को भी 'उपधा' का संस्थागत स्वरूप कह सकते हैं। आज डिजिटल युग में मंत्रियों/अधिकारियों की 'सोशल-मीडिया गतिविधियों' एवं 'खर्च-प्रोफाइल' का विश्लेषण भी 'उपधा' का ही आधुनिक रूप है।

श्लोक २७ (मंत्री के अन्य गुण - भाग १)

श्लोक
स्ववग्रहो जानपदः कुलशीलबलान्वितः । वाग्मी प्रगल्भश् चक्षुष्मान् उत्साही प्रतिपत्तिमान् ॥२७॥

IAST
svavagraho jānapadaḥ kulaśīlabalānvitaḥ | vāgmī pragalbhaś cakṣuṣmān utsāhī pratipattimān ||27||

शब्दार्थ
• **स्ववग्रहः** – आत्म-नियंत्रण रखने वाला
• **जानपदः** – प्रजा/लोक-व्यवहार जानने वाला
• **कुलशीलबलान्वितः** – उत्तम कुल, शील एवं शारीरिक-बल से युक्त
• **वाग्मी** – वाक्पटु
• **प्रगल्भः** – निर्भीक/बहादुर
• **चक्षुष्मान्** – दूरदर्शी
• **उत्साही** – जोशीला
• **प्रतिपत्तिमान्** – संकट में समाधान ढूँढ़ने वाला (संसाधनशील)।

भावार्थ
आदर्श मंत्री आत्म-नियंत्रक, जन-व्यवहार-ज्ञाता, कुलीन-शील-बलवान, वक्ता, निर्भीक, दूरदर्शी, उत्साही एवं संकट-मोचक हो। यह विवरण मंत्री को एक 'आदर्श मानव' (सुपर-मंत्री) की रूपरेखा देता है। कामन्दक जानते हैं कि राजा अकेला असमर्थ है, अतः मंत्री उसका 'मस्तिष्क' एवं 'हाथ' है—उसके गुण ही राज्य की गति निर्धारित करते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'स्ववग्रह' = योग का प्रत्याहार, 'धृति-स्थैर्य' = धारणा। 'स्तम्भ-चापल-हीनता' अहंकार (अस्मिता) एवं राग-द्वेष से मुक्ति को द्योतित करती है—यह सांख्य के 'विवेक-ज्ञान' का लक्षण है। 'प्रतिपत्ति' (संकट-समाधान) वैशेषिक के 'आपद्धर्म' को स्मरण कराती है। यह मंत्री को 'स्थितप्रज्ञ' (गीता) के समकक्ष रखता है, जो सुख-दुःख में समान रहे।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक लोक-प्रशासन एवं मनोविज्ञान में इसे 'इमोशनल इंटेलिजेंस' (EI) एवं 'सोशल इंटेलिजेंस' (SI) कहते हैं। 'स्ववग्रह' EQ का पहला स्तम्भ है। 'जानपद' होना आज 'ग्राउंड रियलिटी' की समझ है—जो उच्च-पदस्थ अधिकारी दूर-दराज के

जीवन से अपरिचित है, वह अप्रभावी है। आज IAS/IPS की ट्रेनिंग में शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक दृढ़ता, एवं मीडिया-प्रबंधन (वाग्मीता) पर जोर दिया जाता है।

श्लोक २८ (मंत्री के अन्य गुण - भाग २)

श्लोक
स्तम्भचापलहीनश् च मैत्रः क्लेशसहः शुचिः । सत्यसत्त्वधृतिस्थैर्यप्रभावारोग्यसंयुतः ॥२८॥

IAST
stambhacāpalahīnaś ca maitraḥ kleśasahaḥ śuciḥ | satyasattvadhṛtisthairya-prabhāvārogya-saṃyutaḥ ||28||

शब्दार्थ
• **स्तम्भचापलहीनः** – अहंकार और चंचलता से रहित
• **मैत्रः** – सबसे मित्रवत
• **क्लेशसहः** – कष्ट-सहिष्णु
• **शुचिः** – पवित्र/ईमानदार
• **सत्य** – सत्यनिष्ठ
• **सत्त्व** – साहस/सात्विक गुण
• **धृति** – धैर्य
• **स्थैर्य** – स्थिरता
• **प्रभाव** – प्रभाव-शक्ति
• **आरोग्य** – स्वास्थ्य से संयुक्त।

भावार्थ
मंत्री अहंकारी न हो, चंचल न हो; सबसे मित्रवत, कष्ट-सहनशील, पवित्र, सत्यवादी, साहसी, धैर्यवान, स्थिरचित्त, प्रभावशाली तथा स्वस्थ हो। मित्रता, क्लेश-सहिष्णुता एवं स्वास्थ्य पर विशेष बल—क्योंकि दीर्घकालीन शासन में ये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। यह मंत्री-चयन के लिए एक '360-डिग्री प्रोफाइल' है।

दार्शनिक विवेचन

यह गुण-सूची योगदर्शन के 'क्लेश-निवृत्ति' एवं 'अष्टांग-साधन' का प्रशासनिक अनुप्रयोग है। 'स्ववग्रह' = प्रत्याहार, 'धृति-स्थैर्य' = धारणा, 'सत्य' = यम (अहिंसा-सत्य), 'शुचि' = नियम। 'आरोग्य' (स्वास्थ्य) पर बल देकर कामन्दक चार्वाक/आयुर्वेद के 'शरीर-आधारित नीति' को मान्यता देते हैं—रोगी मंत्री न तो युद्ध-नीति सोच सकता है, न शीघ्र-कार्य।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'ट्रांसफॉर्मेशनल लीडरशिप' मॉडल में नैतिकता, करुणा, दूरदर्शिता और शारीरिक-मानसिक फिटनेस को अनिवार्य माना जाता है। 'क्लेश-सह' (रिसिलिएंस) आधुनिक मनोविज्ञान में 'ग्रिट' (Grit) कहलाता है। 'प्रभाव' (इन्फ्लुएंस) आज के नेतृत्व का प्रमुख गुण है। WHO भी नेतृत्व के लिए शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य को प्राथमिकता देता है।

श्लोक २९ (मंत्री के प्रायोगिक कौशल)

श्लोक

कृतशिल्पश् च दक्षश् च प्रज्ञावान् धारणान्वितः । दृढभक्तिर् अकर्ता च वैराणां सचिवो भवेत् ॥२९॥

IAST

kṛtaśilpaś ca dakṣaś ca prajñāvān dhāraṇānvitaḥ | dṛḍhabhaktir akartā ca vairāṇām sacivo bhavet ||29||

शब्दार्थ

- **कृतशिल्पः** – शिल्प-कला (लेखन, गणित, युद्ध-विद्या, शास्त्र-कौशल) में पारंगत
- **दक्षः** – फुर्तीला / निपुण
- **प्रज्ञावान्** – प्रज्ञा (विवेक-बुद्धि) से युक्त
- **धारणान्वितः** – अच्छी स्मरण-शक्ति से युक्त
- **दृढभक्तिः** – राज-भक्ति में दृढ़
- **अकर्ता** – न करने वाला
- **वैराणाम्** – शत्रुता/वैर-भावों का
- **सचिवः** – मंत्री
- **भवेत्** – होना चाहिए।

भावार्थ

मंत्री में प्रायोगिक योग्यता (Practical Skills) अनिवार्य है—वह कृतशिल्प (प्रशासनिक कलाओं, अर्थशास्त्र, युद्ध-विद्या एवं लेखा-जोखा में प्रवीण), दक्ष (तत्पर एवं कर्मठ), प्रज्ञावान (हित-अहित का विवेक करने वाला), धारणान्वित (गुप्त सूचनाओं एवं जटिल नीतियों को स्मृति में रखने वाला), तथा दृढ़भक्ति-युक्त (संकट में राजा का साथ न छोड़ने वाला) हो। विशेष रूप से, वह वैरों (शत्रुता, द्वेष-भाव) का अकर्ता हो—अर्थात् वह व्यक्तिगत वैमनस्य न पाले, न संगठन में कलह उत्पन्न करे। ऐसा मंत्री ही राज्य की रीढ़ बनता है—ज्ञान, स्मृति, शिल्प और निष्कलुष भक्ति का सम्मिश्रण।

दार्शनिक विवेचन

'कृतशिल्प' केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं, वरन् 'व्यावहारिक-प्रज्ञा' (Phronesis) है—जिसे अरस्तू ने 'प्रैक्टिकल विजडम' कहा है। 'धारणा' योग के पाँचवें अंग (धारणा) से संबंधित है—मंत्री को चित्त को स्थिर कर जटिल परिस्थितियों की समग्र स्मृति रखनी चाहिए, जो गौतम न्याय के 'स्मृति-प्रमाण' की श्रेणी है। 'दृढ़भक्ति' को कामन्दक ने 'वैर-अकर्तृत्व' (अशत्रुता) से जोड़ा—यह बौद्ध 'मैत्री-भावना' का राजनीतिक रूप है; वैर न करने का अर्थ है 'समता-दृष्टि', जो राज-सेवा को व्यक्तिगत स्वार्थ-संघर्ष से ऊपर उठाती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रशासन एवं कॉर्पोरेट क्षेत्र में इसे 'प्रोफेशनल कम्पिटेंसी' एवं 'इमोशनल मैच्योरिटी' कहते हैं। 'कृतशिल्प' = कार्य-विशेषज्ञता; 'दक्ष' = परफॉर्मेंस एजिलिटी; 'प्रज्ञा' = रणनीतिक बुद्धि; 'धारणा' = इनफॉर्मेशन रिटेंशन; 'दृढ़भक्ति' = संस्थागत वफादारी; 'वैर-अकर्तृत्व' = द्वेष-शून्यता (Non-partisan, Objective approach)। आज 'ई-गवर्नेंस' में 'धारणा' को कंप्यूटर मेमोरी ने बदल दिया है, किन्तु 'प्रज्ञा' (नैतिक-विवेक) और 'अकर्तृत्व' (द्वेष-रहित निर्णय) आज भी दुर्लभ हैं। यह श्लोक आज के 'राजनीतिक-नौकरशाही-टकराव' का समाधान देता है—मंत्री को भक्त तो होना चाहिए, किन्तु अंध-भक्त नहीं, बल्कि शिल्प-प्रज्ञा-धारणा से युक्त।

श्लोक ३० (मंत्रि-सम्पत्ति / मंत्री की पूँजी)

श्लोक

स्मृतिस् तत्परतार्थेषु वितर्को ज्ञाननिश्चयः । दृढता मन्त्रगुप्तिश् च मन्त्रिसम्पत् प्रकीर्तिता ॥३०॥

IAST

smṛtis tatparatārtheṣu vitarko jñānanścayaḥ | dṛḍhatā mantraguptiś ca mantrisampat prakīrtitā ||30||

शब्दार्थ

- **स्मृतिः** – स्मृति-शक्ति
- **तत्परता** – उत्सुकता / लगन
- **अर्थेषु** – कार्यों / विषयों में
- **वितर्कः** – चिन्तन / तर्क-वितर्क
- **ज्ञाननिश्चयः** – निश्चयात्मक ज्ञान / दृढ़-निर्णय
- **दृढता** – दृढ़ता / अटलता
- **मन्त्रगुप्तिः** – गुप्त मंत्र (रणनीति) की रक्षा
- **मन्त्रिसम्पत्** – मंत्री की सम्पत्ति / मंत्रित्व की पूँजी
- **प्रकीर्तिता** – (यह) कही गई है।

भावार्थ

मंत्री की असली पूँजी (सम्पत्ति) बौद्धिक एवं चारित्रिक अस्त्र हैं—(१) स्मृति (भूतपूर्व नीतियों, संधियों को स्मरण), (२) अर्थेषु तत्परता (राज-कार्यों में अविच्छिन्न सक्रियता), (३) वितर्क (गहन विमर्श एवं तर्क-शक्ति), (४) ज्ञाननिश्चय (निर्भीक एवं निश्चित निर्णय), (५) दृढता (संकट में भी हिम्मत न हारना), तथा (६) मन्त्रगुप्ति (राज-नीति के गुप्त रहस्यों को कठोरता से संरक्षित रखना)। ये छः गुण मंत्री की 'प्रकृत सम्पत्ति' हैं—व्यक्ति में निहित अमूल्य निधि, जो धन, बल या पद से अधिक मूल्यवान है।

दार्शनिक विवेचन

'सम्पत्' शब्द बाह्य कोश (धन) की अपेक्षा आंतरिक 'गुण-निधि' को सूचित करता है—यह सांख्य के 'पुरुषार्थ' से निकट है। 'स्मृति' मीमांसा का प्रमुख प्रमाण (अनुभव-जन्य ज्ञान) है; 'तत्परता' कर्तव्य-परायणता का 'रजोगुण' है; 'वितर्क' न्याय-शास्त्र की प्रमुख विधि है; 'ज्ञाननिश्चय' अद्वैत के 'निदिध्यासन' (दृढ़-निश्चय) का प्रशासनिक रूप है; 'दृढता' योग का 'धैर्य' और भक्ति की 'श्रद्धा' है; 'मन्त्रगुप्ति' गूढ़ अर्थों की रक्षा का कला-दर्शन है। यह 'रहस्य-बोध' उपनिषदों के 'गुह्य-विद्या' से जुड़ा है।

आधुनिक संदर्भ

आज के भू-राजनीतिक एवं कॉर्पोरेट युग में इसे 'स्ट्रेटेजिक इंटेलिजेंस कैपिटल' कहा जाता है—'स्मृति' = संस्थागत ज्ञान-भण्डार; 'तत्परता' = कार्य-प्रतिबद्धता; 'वितर्क' = क्रिटिकल थिंकिंग; 'ज्ञाननिश्चय' = डेटा-संचालित निर्णय-क्षमता; 'दृढता' = रेज़िलिएंस; 'मन्त्रगुप्ति' = ऑपरेशनल सिक्योरिटी (OPSEC) एवं साइबर-सुरक्षा। आधुनिक खुफिया एजेंसियाँ (CIA, RAW) 'मंत्रगुप्ति' को सर्वोपरि मानती हैं—जैसा कि विकीलीक्स जैसे रिसावों ने सिद्ध किया है, गोपनीयता का क्षरण राज्य-हित को चरमरा देता है। आज यह श्लोक 'नॉलेज वर्कर' (ज्ञान-कर्मी) की पूँजी को परिभाषित करता है।

श्लोक ३१ (पुरोहित के गुण एवं कर्तव्य)

श्लोक
त्रय्यां च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात् पुरोहितः । अथर्वविहितं नित्यं कुर्याच् छान्तिकपौष्टिकम् ॥३१॥

IAST
trayyāṃ ca daṇḍanītyāṃ ca kuśalaḥ syāt purohitaḥ | atharvavihitaṃ nityaṃ kuryāc chāntikapauṣṭikam ||31||

शब्दार्थ
• **त्रय्याम्** – तीनों वेदों (ऋक्, यजुः, साम) में
• **दण्डनीत्याम्** – दण्डनीति / राजप्रशासन-नीति में
• **कुशलः** – निपुण / पारंगत
• **पुरोहितः** – राजपुरोहित (प्रधान धार्मिक सलाहकार)
• **अथर्वविहितम्** – अथर्ववेद में विधान किये गये
• **नित्यम्** – निरन्तर / प्रतिदिन
• **कुर्यात्** – करे
• **शान्तिक** – शान्ति-कर्म (उपद्रव-निवारण)
• **पौष्टिकम्** – पौष्टिक कर्म (बल, वृद्धि, समृद्धि हेतु)

भावार्थ
राजा को ऐसा पुरोहित नियुक्त करना चाहिए जो तीनों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद) तथा दण्डनीति (राज्य-प्रशासन एवं नीति-शास्त्र) में समान रूप से कुशल हो। उसे अथर्ववेद के अनुसार शान्तिक (ग्रह-दोष, उत्पात, राष्ट्रीय आपदाओं की शान्ति) और पौष्टिक (राज्य की अभिवृद्धि, सेना का बल, फसलों की वृद्धि) कर्मों का नित्य अनुष्ठान करना चाहिए। पुरोहित केवल धार्मिक आचार्य नहीं, वरन् राजनीति का मर्मज्ञ, आपदा-प्रबन्धन का विशेषज्ञ एवं राजा का प्रमुख मार्गदर्शक है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'धर्म' और 'दण्ड' के अद्वैत (अभिन्नता) पर आधारित है—राज्य-शक्ति (दण्ड) को धर्म से पृथक नहीं माना; धर्म ही दण्ड-नीति का आधार है। पुरोहित का द्वैध-कौशल मानव-जीवन के अध्यात्म एवं व्यवहार—दोनों पक्षों का सन्तुलन सूचित करता है। 'शान्तिक' कर्म बाह्य एवं आभ्यन्तरिक अशान्ति के निवारण का प्रतीक है—जो योग एवं सांख्य के 'दुःख-निवृत्ति' मार्ग से मेल खाता है; 'पौष्टिक' कर्म जीवन-शक्ति के उत्कर्ष का विधान है—जो मीमांसा के 'अभ्युदय' का द्योतक है। पुरोहित उस 'ऋत' (ब्रह्माण्डीय व्यवस्था) का प्रतिनिधि है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक युग में यह 'विशेषज्ञ-सलाहकार' एवं 'संवैधानिक पदाधिकारी' की भूमिका का प्राचीन स्वरूप है। आज राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री के पास नैतिक-धार्मिक सलाहकार, कानूनी विशेषज्ञ और अर्थशास्त्री होते हैं। 'शान्तिक' का आधुनिक अर्थ—आपदा प्रबन्धन (युद्ध, महामारी, प्राकृतिक आपदा); 'पौष्टिक' का अर्थ—आर्थिक विकास, सामाजिक कल्याण, स्वास्थ्य सुरक्षा। संसद/कैबिनेट में किसी विधेयक से पूर्व कानूनी-संवैधानिक जाँच (दण्डनीति-कुशलता) और सामाजिक प्रभाव का आकलन (त्रयी-ज्ञान) आवश्यक होता है।

श्लोक ३२ (मंत्रियों की परीक्षा—दूरदर्शिता एवं कौशल)

श्लोक
साधु तेषाम् अमात्यानां तद्विद्येभ्यश् च बुद्धिमान् । चक्षुष्मत्तां च शिल्पं च परीक्षेत गुणद्वयम् ॥३२॥

IAST
sādhu teṣām amātyānāṃ tadvidyebhyaś ca buddhimān | cakṣuṣmattāṃ ca śilpaṃ ca parīkṣeta guṇadvayam ||32||

शब्दार्थ
- **साधु** – उत्तम रीति से
- **तेषाम्** – उन (मंत्रियों)
- **अमात्यानाम्** – मंत्रियों / सचिवों की
- **तद्विद्येभ्यः** – उनके शास्त्र-ज्ञाता सहायकों से
- **बुद्धिमान्** – बुद्धिमान राजा
- **चक्षुष्मत्ताम्** – दूरदर्शिता / सूक्ष्म-दृष्टि
- **शिल्पम्** – कला / व्यावहारिक कौशल
- **परीक्षेत** – परीक्षा करे
- **गुणद्वयम्** – (इन) दोनों गुणों को

भावार्थ
बुद्धिमान राजा को मंत्रियों तथा उनके विद्वत्-सहयोगियों के 'चक्षुष्मत्ता' (सूक्ष्मदृष्टि, भविष्य-दर्शन, परिणामों का आकलन) और 'शिल्प' (प्रशासनिक तकनीक, अभियांत्रिकी, कार्य-सम्पादन-कला)—इन दो गुणों की सुविधिपूर्वक जाँच करनी चाहिए। मंत्री का केवल सैद्धान्तिक ज्ञान (तद्विद्या) पर्याप्त नहीं; उसे स्थिति को समझने की गहरी दृष्टि तथा प्रत्यक्ष कार्य-क्षमता भी चाहिए। यह परीक्षा बिना किसी मोह या पक्षपात के होनी चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह 'ज्ञान' एवं 'क्रिया' के द्वैत को समाहित करता है। 'चक्षुष्मत्ता' = प्रज्ञा (Wisdom)—तत्त्व-दर्शी दृष्टि, जो सत्-असत्, हित-अहित का विवेक करती है। 'शिल्प' = प्रयोगात्मक बुद्धि (Applied Intelligence)—योजना-निर्माण से क्रियान्वयन तक का मार्ग। शंकराचार्य का 'ज्ञान-कर्म समुच्चय' यहाँ प्रतिबिम्बित होता है। अरस्तू ने भी 'Theoretical Wisdom' (Sophia) और 'Practical Wisdom' (Phronesis) का यही भेद किया है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबन्धन और लोक-सेवा में 'आईएएस / आईपीएस' चयन प्रक्रिया इसी पर आधारित है—'चक्षुष्मत्ता' = विज़नरी लीडरशिप, संकट-पूर्वानुमान, डेटा-विश्लेषण क्षमता; 'शिल्प' = तकनीकी ज्ञान, परियोजना-प्रबन्धन, संचार-कौशल। किसी भी बड़े संगठन में एमडी/सीईओ अपनी टीम को 360-डिग्री असेसमेंट, सिमुलेशन व्यायाम और पिछली परियोजनाओं के परिणाम के आधार पर परखता है।

श्लोक ३३ (स्वजनों से मंत्री की जानकारी)

श्लोक
स्वजनेभ्यो विजानीयात् कुलं स्थानम् अवग्रहम् । परिकर्मसु दाक्ष्यं च विज्ञानं धारयिष्णुताम् ॥३३॥

IAST
svajanebhyo vijānīyāt kulaṃ sthānam avagraham | parikarmasu dākṣyaṃ ca vijñānaṃ dhārayiṣṇutām ||33||

शब्दार्थ
- **स्वजनेभ्यः** – अपने निकट-सम्बन्धियों / विश्वस्त जनों से
- **विजानीयात्** – जान ले
- **कुलम्** – वंश / पारिवारिक पृष्ठभूमि
- **स्थानम्** – पद / प्रतिष्ठा / सामाजिक स्थान
- **अवग्रहम्** – संयम / ग्रहण-शक्ति / नियन्त्रण-क्षमता
- **परिकर्मसु** – प्रशासनिक-कार्यों / सेवा-कार्यों में
- **दाक्ष्यम्** – निपुणता / दक्षता
- **विज्ञानम्** – विशिष्ट-ज्ञान
- **धारयिष्णुताम्** – धारण-शक्ति / स्मृति-बल / गोपनीय-रक्षण-क्षमता

भावार्थ
राजा अपने स्वजन (करीबी विश्वस्त जनों, पारिवारिक सदस्यों या आत्मीय मित्रों) के माध्यम से मंत्री के 'कुल' (वंश-परम्परा, संस्कार), 'स्थान' (समाज/राज्य में प्रतिष्ठित स्थान), 'अवग्रह' (आत्म-संयम), 'दाक्ष्य' (प्रशासनिक कार्यों में दक्षता), 'विज्ञान' (शास्त्रीय-ज्ञान) तथा 'धारयिष्णुता' (रहस्य धारण करने की क्षमता) के बारे में जानकारी प्राप्त करे। यह जानकारी प्रत्यक्ष परीक्षा से पूर्व एक अनौपचारिक स्रोत है, जो राजा को मंत्री के संस्कार और अन्तरंग प्रवृत्तियों को समझने में सहायता देती है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'संस्कारवाद' को उद्घाटित करता है। 'कुल' का अर्थ केवल जाति-गौरव नहीं, बल्कि संस्कार-परम्परा है—गीता में वर्णित 'स्वधर्म' का आधार यही है। 'स्थान' अर्थात् समाज-व्यवस्था में भूमिका, जो कर्तव्य-बोध को निर्धारित करती है। 'अवग्रह' (संयम) योग-दर्शन का प्रत्याहार है; बिना इन्द्रिय-संयम के मंत्री भ्रष्ट हो सकता है। 'धारयिष्णुता' गुप्त-नीतियों की रक्षा है—यह मनःशास्त्र की 'स्मृति-तन्त्र' तथा राजनय की 'गोपनीयता-नीति' का प्राचीन सूत्र है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक HR प्रबन्धन में यह 'बैकग्राउण्ड वेरिफिकेशन', 'रिफरेंस चेक' और 'साइकोमेट्रिक टेस्ट' का प्राचीन रूप है। 'कुल' = पारिवारिक पृष्ठभूमि एवं नैतिक मूल्य; 'स्थान' = कार्य-अनुभव; 'अवग्रह' = तनाव-प्रबंधन एवं भावनात्मक बुद्धि (EQ); 'धारयिष्णुता' = गोपनीयता-समझौता (NDA) एवं सूचना-सुरक्षा का पालन। आज किसी उच्च-पद के उम्मीदवार का उसके पिछले संगठन, सहयोगियों और पारिवारिक पृष्ठभूमि के माध्यम से गहन परीक्षण किया जाता है।

श्लोक ३४ (तीन गुणों की परीक्षा—प्रागल्भ्य, प्रतिभा, वाग्मित्व, सत्य)

श्लोक
गुणत्रयं परीक्षेत प्रागल्भ्यं प्रतिभां तथा । कथायोगेषु बुध्येत वाग्मित्वं सत्यवादिताम् ॥३४॥

IAST
guṇatrayaṃ parīkṣeta prāgalbhyaṃ pratibhāṃ tathā | kathāyogeṣu budhyeta vāgmitvaṃ satyavāditām ||34||

शब्दार्थ
- **गुणत्रयम्** – तीन गुण
- **परीक्षेत** – परीक्षा करे
- **प्रागल्भ्यम्** – आत्मविश्वास / निर्भीकता
- **प्रतिभाम्** – मौलिक प्रज्ञा / सूझ-बूझ
- **तथा** – तथा
- **कथायोगेषु** – वार्तालाप / चर्चा / संवाद के अवसरों पर
- **बुध्येत** – समझे / पहचाने
- **वाग्मित्वम्** – वक्तृत्व-कला / मधुर-वाणी
- **सत्यवादिताम्** – सत्य बोलने की वृत्ति

भावार्थ
राजा मंत्री में 'प्रागल्भ्य' (निर्भीक एवं स्पष्टवादिता), 'प्रतिभा' (असाधारण बौद्धिक-क्षमता), तथा 'वाग्मित्व' एवं 'सत्यवादिता' (वाणी-सम्बन्धी गुण)—इन तीन प्रमुख गुणों (या चार उप-गुणों) को अवश्य परखना चाहिए। 'कथायोग' अर्थात् राज-सभा की बहस, मन्त्रणा-वार्तालाप या दूत-व्यवहार के समय ये गुण स्वयं प्रकट हो जाते हैं। एक अच्छा मंत्री न तो भय-ग्रस्त होकर राजा की खुशामद करता है, न असत्य बोलता है; वह अपनी मौलिक बुद्धि से युक्त, साहसपूर्वक, मधुर वचनों से सत्य को प्रस्तुत करता है।

दार्शनिक विवेचन

यहाँ तीन गुण—साहस (प्रागल्भ्य), बुद्धि (प्रतिभा), एवं वाणी (वाग्मित्व + सत्य)—का समुच्चय है। प्रागल्भ्य 'अभय' (Fearlessness) है, जो उपनिषदों के 'अभयं प्राप्नुवन्ति' का व्यावहारिक रूप है। 'वाग्मित्व' अभिव्यक्ति-कला है; ग्रीक दर्शन में इसे 'रिटोरिक' (Rhetoric) कहा गया। परन्तु यहाँ 'सत्यवादिता' उसे नीति-शास्त्र (Ethics) से जोड़ देती है—वाक् केवल प्रभावशाली नहीं, अपितु यथार्थ पर आधारित होनी चाहिए। मानव-चेतना की त्रिविध अभिव्यक्ति—ज्ञान (प्रतिभा), इच्छा-शक्ति (प्रागल्भ्य), एवं संप्रेषण (वाग्मित्व)—यहाँ आलोचित हुई है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक संगठनों में 'संचार-क्षमता' (Communication), 'आत्मविश्वास' (Confidence) और 'नवाचार-क्षमता' (Innovation)—ये तीन प्रमुख सॉफ्ट-स्किल्स हैं। प्रागल्भ्य = हिम्मत करके पारम्परिक मान्यताओं को चुनौती देना (Constructive Confrontation); प्रतिभा = 'डिज़ाइन थिंकिंग' क्षमता; वाग्मित्व + सत्य = आकर्षक प्रस्तुति (Presentation) के साथ पारदर्शिता और सत्यनिष्ठा। आज साक्षात्कार, समूह-चर्चा और संसदीय बहस में इन्हीं गुणों को परखा जाता है।

श्लोक ३५ (आपदि—संकट में लक्षण)

श्लोक
उत्साहं च प्रभावं च तथा क्लेशसहिष्णुताम् । धृतिं चैवानुरागं च स्थैर्यं चापदि लक्षयेत् ॥३५॥

IAST
utsāhaṃ ca prabhāvaṃ ca tathā kleśasahiṣṇutām | dhṛtiṃ caivānurāgaṃ ca sthairyaṃ cāpadi lakṣayet ||35||

शब्दार्थ
- **उत्साहम्** – उद्यम / उत्साह / कार्य-प्रवृत्ति
- **प्रभावम्** – प्रभाव / प्रताप / अधिकार-चिह्न
- **तथा** – तथा
- **क्लेशसहिष्णुताम्** – कष्ट / कठिनाई सहन करने की क्षमता
- **धृतिम्** – धैर्य / धारणा-शक्ति
- **अनुरागम्** – लगाव / समर्पण-भाव
- **स्थैर्यम्** – स्थिरता / निश्चलता
- **आपदि** – आपत्ति / विपत्ति में
- **लक्षयेत्** – लक्ष्य / पहचान / परीक्षण करे

भावार्थ
राजा मंत्री के उत्साह (सक्रियता), प्रभाव (लोगों पर प्रभाव डालने की शक्ति), क्लेश-सहिष्णुता (कष्ट सहने की क्षमता), धृति (आन्तरिक धैर्य), अनुराग (राज्य एवं राजा के प्रति निष्ठा-प्रेम) और आपदि-स्थैर्य (विपत्ति में अविचलित मनोबल)—इन छः मनो-सामर्थ्यों को अवश्य पहचानना चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में मंत्री दक्ष दिख सकता है, परन्तु वास्तविक परीक्षा आपदा में होती है। जो मंत्री कठिन समय में भी अनुराग बनाए रखता है, वही सच्चा सहायक है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'आपत्कालीन-नीति' (Crisis Ethics) का आधार है। भारतीय दर्शन में 'धृति' का अत्यन्त महत्व है—गीता में इसे 'स्थितप्रज्ञता' कहा गया है। 'उत्साह' रजोगुण की प्रधानता है; 'धृति' सत्त्वगुण की; 'स्थैर्य' तमोगुण का संतुलित रूप है। 'क्लेश-सहिष्णुता' सांख्य-योग की 'तितिक्षा' (सहनशीलता) है। दार्शनिक रूप में, मानव-चरित्र का वास्तविक स्वरूप विपत्ति की कसौटी पर ही खुलता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक व्यवसायिक जगत में 'रेज़िलिएंस' (Resilience), 'ग्रिट' (Grit), 'लॉयल्टी' और 'स्ट्रेस मैनेजमेंट' को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। उत्साह = कर्मठता; प्रभाव = नेतृत्व-क्षमता; क्लेशसहिष्णुता = अत्यधिक दबाव सहने की क्षमता; धृति एवं स्थैर्य = संकट-काल (कोविड, आर्थिक मंदी) में निर्णय-क्षमता; अनुराग = 'एम्प्लॉयी इंगेजमेंट' (Employee Engagement)। किसी भी सीईओ की टीम में वे लोग अधिक मूल्यवान होते हैं, जो मुश्किल घड़ी में घबराते नहीं।

श्लोक ३६ (व्यवहारतः जाँच)

श्लोक
भक्तिं मैत्रीं च शौचं च जानीयाद् व्यवहारतः । संवासिभ्यो बलं सत्त्वम् आरोग्यं शीलम् एव च ॥३६॥

IAST
bhaktiṃ maitrīṃ ca śaucaṃ ca jānīyād vyavahārataḥ | saṃvāsibhyo balaṃ sattvam ārogyaṃ śīlam eva ca ||36||

शब्दार्थ
- **भक्तिम्** – भक्ति / निष्ठा / समर्पण
- **मैत्रीम्** – मैत्री / मित्र-भाव / सहिष्णुता
- **शौचम्** – शुद्धता / ईमानदारी

- **जानीयात्** – जाने / पहचाने
- **व्यवहारतः** – दैनिक कार्य-व्यवहार / आचरण से
- **संवासिभ्यः** – सहवासियों / सह-कर्मचारियों / सहयोगियों से
- **बलम्** – शारीरिक-मानसिक बल
- **सत्त्वम्** – साहस / आन्तरिक उर्जा
- **आरोग्यम्** – स्वास्थ्य / निरोगिता
- **शीलम्** – सदाचार / चरित्र / नैतिकता

भावार्थ
राजा मंत्री की भक्ति (निष्ठा), मैत्री (सौहार्द), शौच (चारित्रिक-आर्थिक शुद्धता) को उसके दैनिक व्यवहार (व्यवहारतः) से जाने। तथा उसके सहवासियों (संवासिभ्यः), अर्थात् साथ कार्य करने वाले सहयोगियों, से उसके बल (शारीरिक-मानसिक क्षमता), सत्त्व (आन्तरिक धैर्य), आरोग्य (स्वास्थ्य) और शील (चरित्र) के बारे में जानकारी ले। 'व्यवहार' कर्मों का प्रत्यक्ष रूप है; उससे छल-छद्म नहीं छिपता। मंत्री का शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य एवं सामाजिक चरित्र राज्य-हित के लिए आवश्यक है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'कर्म-प्रमाणवाद' पर आधारित है—व्यक्ति का वास्तविक स्वरूप उसके बाह्य-आचरण से ही जाना जाता है। 'भक्ति', 'मैत्री', 'शौच'—ये तीनों 'यम-नियम' (योग-सूत्र) से सम्बन्धित हैं। 'संवास' अर्थात् सह-जीवन—समाज-दर्शन के अनुसार व्यक्ति का चरित्र उसके सह-परिवेश से निर्मित और आंका जाता है, जैसे अरस्तू ने 'मित्रों का चुनाव' को नैतिक-जीवन का आधार माना। मंत्री का 'सत्त्व' गुण और 'आरोग्य' (स्वास्थ्य) उसे दीर्घकालीन शासन-सेवा के योग्य बनाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रशासन एवं कॉर्पोरेट जगत में 'Behavioural Assessment' एवं 'Peer Review' (सहकर्मी-मूल्यांकन) इसी का रूप है। भक्ति = Organizational Commitment; मैत्री = Team Building; शौच = Integrity; संवासिभ्यः = 360-Degree Feedback; बल, सत्त्व, आरोग्य, शील = फिटनेस, मेंटल हेल्थ, एंड्योरेंस और कैरेक्टर। आज बड़ी कम्पनियाँ कर्मचारियों की 'मानसिक-स्वास्थ्य' और 'शारीरिक फिटनेस' पर विशेष ध्यान देती हैं।

श्लोक ३७ (प्रत्यक्षतः परीक्षण)

श्लोक
अस्तब्धताम् अचापल्यं वैराणां चाप्य् अकर्तृताम् । प्रत्यक्षतो विजानीयाद् भद्रतां क्षुद्रताम् अपि ॥३७॥

IAST
astabdhatām acāpalyaṃ vairāṇāṃ cāpy akartṛtām | pratyakṣato vijānīyād bhadratāṃ kṣudratām api ||37||

शब्दार्थ
- **अस्तब्धताम्** – अहंकार-रहितता / नम्रता / सरलता
- **अचापल्यम्** – चंचलता का अभाव / गम्भीरता / धैर्य
- **वैराणाम्** – शत्रुता / वैर-भाव
- **अकर्तृताम्** – न करना / रहित होना (वैर-भाव न रखना)
- **प्रत्यक्षतः** – प्रत्यक्ष / स्वयं देखकर

- **विजानीयात्** – जान ले
- **भद्रताम्** – भद्रता / सज्जनता / कल्याण-कारिता
- **क्षुद्रताम्** – क्षुद्रता / तुच्छता / नीचता
- **अपि** – भी

भावार्थ
राजा प्रत्यक्ष (स्वयं उपस्थित रहकर) मंत्री की अस्तब्धता (बिना घमण्ड के शिष्टाचार), अचापल्य (उतावलेपन का अभाव), वैर-अकर्तृत्व (किसी से द्वेष न रखना), भद्रता (उदार वृत्ति) तथा क्षुद्रता (तुच्छ स्वभाव) को पहचाने। 'प्रत्यक्षतः' शब्द विशेष महत्व रखता है—राजा को मंत्री के साथ आमने-सामने के व्यवहार, बैठकों में उसके बोलने-चालने, संकट में उसकी प्रतिक्रिया को स्वयं देखना चाहिए। 'क्षुद्रता' को परखना भी आवश्यक है, क्योंकि क्षुद्र मंत्री प्रतिशोध, ईर्ष्या और आडम्बरों में पड़कर राज्य-हित की हानि कर सकता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'आत्म-अवलोकन' एवं 'प्रत्यक्ष-प्रमाण' (Pratyaksha Pramana) के सिद्धान्त पर आधारित है—न्याय-दर्शन में 'प्रत्यक्ष' को प्रमाणों में श्रेष्ठ माना गया है। 'अस्तब्धता' अहंकार-शून्यता है (गीता: 'अमानित्वं अदम्भित्वम्')। 'अचापल्य' स्थिरबुद्धि है; चापल्य रजोगुण की अतिवृद्धि है। 'वैर-अकर्तृत्व' क्षमा एवं उदारता का प्रतीक है—केवल दुर्बल लोग ही छोटी बातों का वैर पालते हैं। यह प्लेटो के 'थायमोस' (प्रतिस्पर्धी आत्मा) और 'एपिथ्युमिया' (वासना) के विश्लेषण से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबन्धन में 'निरीक्षणात्मक मूल्यांकन' (Observational Assessment) महत्वपूर्ण है। अस्तब्धता = ह्यूमिलिटी (विनम्रता); अचापल्य = इमोशनल स्टेबिलिटी; वैर-अकर्तृत्व = नॉन-टॉक्सिक वर्क कल्चर; क्षुद्रता = माइक्रो-मैनेजमेंट, ईर्ष्या; प्रत्यक्षतः—आधुनिक 'असेसमेंट सेंटर' में उम्मीदवारों को समूह-चर्चा, रोल-प्ले, प्रेजेंटेशन देकर प्रत्यक्ष परीक्षण किया जाता है, क्योंकि कागजी परीक्षाएँ केवल ज्ञान बताती हैं, चरित्र नहीं।

श्लोक ३८ (परोक्ष गुणों का कर्म-फल से अनुमान)

श्लोक
कर्मानुमेयाः सर्वत्र परोक्षगुणवृत्तयः । तस्मात् परोक्षवृत्तीनां फलैः कर्म विभावयेत् ॥३८॥

IAST
karmānumeyāḥ sarvatra parokṣaguṇavṛttayaḥ | tasmāt parokṣavṛttīnāṃ phalaiḥ karma vibhāvayet ||38||

शब्दार्थ
- **कर्मानुमेयाः** – कर्म (कार्य) से अनुमान करने योग्य
- **सर्वत्र** – सब जगह / सभी विषयों में
- **परोक्षगुणवृत्तयः** – परोक्ष (अप्रत्यक्ष) गुण एवं वृत्तियाँ (स्वभाव)
- **तस्मात्** – इसलिए
- **परोक्षवृत्तीनाम्** – जिनकी वृत्तियाँ छिपी हों
- **फलैः** – परिणामों / फलों से
- **कर्म** – उनके कर्म / कार्य
- **विभावयेत्** – निर्धारित करे / पहचाने

भावार्थ
संसार में सभी मनुष्यों के परोक्ष (गुप्त, आन्तरिक) गुण एवं स्वभाव उनके कर्मों (कार्यों) से अनुमानित किये जा सकते हैं। राजा को ऐसे व्यक्तियों (जिनके आन्तरिक भाव छिपे हों) के वास्तविक स्वरूप को उनके किये हुए कार्यों के परिणामों (फलों) के माध्यम से ही पहचानना चाहिए। अर्थात्, राजा को मंत्री की शपथों, वचनों पर नहीं, बल्कि उसके भूतपूर्व एवं वर्तमान कार्यों के ठोस परिणामों पर ध्यान देना चाहिए। यह कर्म-प्रतिफल का व्यावहारिक सूत्र है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'कर्म-फल सिद्धान्त' का प्रशासनिक अनुप्रयोग है। 'परोक्ष-वृत्ति' अर्थात् अन्तःकरण की गुप्त प्रेरणाएँ केवल बाह्य-कर्म के प्रतिफल से ही स्पष्ट होती हैं। यह 'परिणामवाद' (Consequentialism) से सम्बन्ध रखता है—यद्यपि भारतीय नीति-शास्त्र केवल परिणाम-प्रधान नहीं, फिर भी राज्य-व्यवहार में कर्म-परिणाम ही एकमात्र मूर्त प्रमाण हैं। काण्ट (Kant) का कर्तव्य-शास्त्र (Deontology) इसके विपरीत है, पर कामन्दक यहाँ कहते हैं कि राजा के लिए 'परिणाम' प्रत्यक्ष है, इसलिए सिद्ध-उपयोगिता पर ही विश्वास करना चाहिए।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक संगठनात्मक प्रबन्धन का आधार 'परफॉर्मेंस अपराइजल' (Performance Appraisal) और 'केपीआई' (Key Performance Indicators) इसी सिद्धान्त पर टिका है। किसी अधिकारी का मूल्यांकन उसके 'इरादों' से नहीं, बल्कि 'लक्ष्यों', 'परिणामों' और 'प्रोजेक्ट डिलीवरी' से किया जाता है। 'परोक्ष-वृत्ति'—आज के 'प्रोबेशन' या 'ट्रायल पीरियड' में अधिकारी की छिपी प्रतिभा उसके कार्य-परिणाम से चलती है। रिज्यूम (शब्द) नहीं, पोर्टफोलियो (परिणाम) ही असली प्रमाण है।

श्लोक ३९ (मंत्रियों द्वारा राजा को अकार्य से रोकना)

श्लोक
सज्जमानम् अकार्येषु निरुन्ध्युर् मन्त्रिणो नृपम् । गुरूणाम् अपि चैतेषां शृणुयान् नृपतिर् वचः ॥३९॥

IAST
sajjamānam akāryeṣu nirundhyur mantriṇo nṛpam | gurūṇām api caiteṣāṃ śṛṇuyān nṛpatir vacaḥ ||39||

शब्दार्थ
• **सज्जमानम्** – प्रवृत्त होते हुए / तत्पर होते हुए
• **अकार्येषु** – अनुचित / अधर्म / हानिकारक कार्यों में
• **निरुन्ध्युः** – रोकें / निवारण करें
• **मन्त्रिणः** – मंत्री / सचिव
• **नृपम्** – राजा को
• **गुरूणाम्** – गुरुओं (पुरोहित, आचार्य, वृद्ध-सलाहकार) के
• **अपि** – भी
• **च** – और
• **एतेषाम्** – इन (मंत्रियों) के
• **शृणुयात्** – सुने / ग्रहण करे
• **नृपतिः** – राजा
• **वचः** – वचन / बात

भावार्थ
जब राजा अनुचित (अकार्य) कर्मों में प्रवृत्त होने लगे—अधर्म, अत्याचार, अतिव्यय, गलत युद्ध-नीति, भ्रष्ट आचरण—तो मंत्रियों को उसे रोकना चाहिए (निरुन्ध्युः)। राजा न केवल गुरुओं (वेद-विद्या के आचार्य, पुरोहित) की बात सुने, वरन् इन मंत्रियों के वचनों को भी श्रद्धापूर्वक सुने एवं माने। राजा की इच्छा निरंकुश नहीं होनी चाहिए; मंत्रि-परिषद् उसकी नीतियों पर प्रतिबन्ध (चेक) लगाने वाली संस्था है। यदि मंत्री किसी दुष्कार्य को रोकने में असमर्थ हैं, तो वे अपने कर्तव्य में चूक जाते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह 'सीमित राजतन्त्र' एवं 'सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया' का प्राचीनतम सूत्र है। मंत्रि-परिषद् राजा का 'विवेक-प्रतिनिधि' है, जो उसे तर्क-युक्त रोक-टोक करता है। यह प्लेटो के 'नोमोस' (कानून) और 'आर्के' (शासक) के सिद्धान्त से मेल खाता है—शासक को कानून के अधीन रहना चाहिए। 'गुरूणाम् अपि... एतेषाम्'—मंत्रियों को गुरु के सम्मानीय स्थान पर रखना, राजा की विनम्रता एवं बुद्धिमत्ता को दर्शाता है। यह अनिवार्य रूप से 'सुशासन का लोकतान्त्रिक पक्ष' है।

आधुनिक संदर्भ

यह आधुनिक 'कैबिनेट प्रणाली' (Cabinet System) और 'संसदीय शासन-व्यवस्था' का आधार है। आधुनिक लोकतंत्र में प्रधानमंत्री/राष्ट्रपति को मंत्रि-मण्डल द्वारा सलाह दी जाती है; यदि वे असंवैधानिक कदम उठाते हैं, तो मंत्रिमण्डल उन्हें रोकता है। 'गुरूणाम् अपि...'—आज विधि-विशेषज्ञ, संवैधानिक न्यायालय, और नैतिक सलाहकार (Ethics Committee) की भूमिका मंत्रियों के वचन के साथ शासक को सही मार्ग दिखाती है। संगठनात्मक स्तर पर, यह बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स की भूमिका है, जो सीईओ को गलत निर्णयों से रोकते हैं।

श्लोक ४० (राजा-बोध से प्रजा-बोध—सूर्य-कमल उपमा)

श्लोक
नरेश्वरे जगत् सर्वं निमीलति निमीलति । सूर्योदय इवाम्भोजं तत्प्रबोधे प्रबुध्यते ॥४०॥

IAST
nareśvare jagat sarvaṃ nimīlati nimīlati | sūryodaya ivāmbhojaṃ tatprabodhe prabudhyate ||40||

शब्दार्थ
• **नरेश्वरे** – राजा / नरेश में
• **जगत् सर्वम्** – सम्पूर्ण विश्व / राज्य-समाज
• **निमीलति** – बंद / मुरझा / सुषुप्त / निष्क्रिय हो जाता है
• **निमीलति** – (पुनः आग्रहार्थ)
• **सूर्योदये** – सूर्य के उदय होने पर
• **अम्भोजम्** – कमल (जल में उत्पन्न)
• **इव** – के समान
• **तत्प्रबोधे** – उस (राजा) के जागृत / प्रबुद्ध होने पर
• **प्रबुध्यते** – जागृत / खिल / सक्रिय / विकसित हो जाता है

भावार्थ
जैसे सूर्यास्त होने पर कमल स्वयं मुरझा जाता है (निमीलति) और सूर्योदय होने पर खिल उठता है (प्रबुध्यते), उसी प्रकार राजा (नरेश्वर) के शिथिल, निष्क्रिय, मन्द या अप्रबुद्ध होने पर सम्पूर्ण राज्य-व्यवस्था एवं प्रजा मानो सो जाती है—गतिहीन,

अव्यवस्थित या अल्पविकसित हो जाती है। परन्तु जैसे ही राजा सतर्क, प्रबुद्ध, सक्रिय और नीति-निष्ठ होता है, वैसे ही पूरा राष्ट्र जाग्रत, क्रियाशील और समृद्ध हो उठता है। राजा के सोने-जागने का अर्थ मात्र शारीरिक स्थिति नहीं, बल्कि मानसिक सतर्कता, दूरदर्शिता एवं प्रशासनिक सक्रियता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'नेतृत्व-केन्द्रित' (Leadership-centric) दर्शन है, जो राजा को 'सूर्य-रूपक' प्रदान करता है। सूर्य ब्रह्माण्ड का केन्द्र है; उसके बिना पृथ्वी पर जीवन असम्भव है। दार्शनिक दृष्टि से, राजा 'व्यवस्था-प्रमुख' है, जिसकी चेतना एवं निर्णय-क्षमता से समाज की 'अन्तर्चेतना' (Collective Consciousness) जाग्रत या सुप्त होती है। यह उपनिषदों के 'सूर्य आत्मा' से गहरा सम्बन्ध रखता है—'निमीलति' (संहार) और 'प्रबोध' (सृष्टि) की यह क्रिया ब्रह्माण्डीय स्पन्दन (Cosmic Pulse) है। अरस्तू ने राजा को 'जीवन्त-विधि' (Living Law) कहा है—यहाँ 'सत्ता का नैतिक दायित्व' (Moral Responsibility of Power) प्रतिष्ठापित होता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबन्धन एवं राजनीति-शास्त्र में इसे 'टोन फ्रॉम द टॉप' (Tone from the Top) एवं 'लीडरशिप इन्फ्लुएंस' कहते हैं। किसी संगठन का प्रमुख जिस प्रकार का आचरण एवं उत्साह प्रदर्शित करता है, पूरा संगठन वैसा ही प्रतिबिम्बित करता है। यदि नेता भ्रष्ट, आलसी या अप्रबुद्ध है, तो संस्था 'निमीलति' (स्तब्ध) हो जाती है—जैसे 2008 की वैश्विक मंदी या खराब नेतृत्व में कम्पनी का पतन। यदि नेता सूर्य के समान प्रकाशमान है, तो टीम/राष्ट्र 'प्रबुध्यते'—नवाचार, आर्थिक विकास और सामाजिक-सद्भाव उत्पन्न होता है (सिंगापुर का ली कुआन यू, अमेरिका का रूजवेल्ट)। यह श्लोक 'विजनरी लीडरशिप' के महत्व को 2500 वर्ष पूर्व ही सिद्ध कर देता है।

श्लोक ४१ (मंत्रियों द्वारा राजा को प्रबुद्ध करना)

श्लोक
तद् बोधयेज् जगन्नाथं संबुध्येत यथा तथा । धीसत्त्वोद्योगसम्पन्नैस् तत् कार्यं तदुपाश्रितैः ॥४१॥

IAST
tad bodhayej jagannātham saṃbudhyeta yathā tathā | dhīsattvodyogasampannais tat kāryaṃ tadupāśritaiḥ ||41||

शब्दार्थ
• **तत्** – इसलिए / वह (राजा को)
• **बोधयेत्** – जागृत / सचेत / प्रबुद्ध करे
• **जगन्नाथम्** – जगत् के स्वामी (राजा) को
• **संबुध्येत** – वह (राजा) जागृत / सजग हो जाए
• **यथा तथा** – जिस प्रकार (उचित रूप से)
• **धी** – बुद्धि / विवेक
• **सत्त्व** – साहस / आन्तरिक बल / नैतिक दृढ़ता
• **उद्योग** – परिश्रम / कार्य-प्रवृत्ति
• **सम्पन्नैः** – युक्त / सम्पन्न
• **तत् कार्यम्** – वह (बोध-कार्य) करना चाहिए
• **तदुपाश्रितैः** – उस (राजा) के आश्रित / सेवक / मंत्रियों द्वारा

भावार्थ
राजा के आश्रित अधिकारी, मंत्री एवं सलाहकार, जो स्वयं बुद्धि (धी), साहस (सत्त्व) और परिश्रम (उद्योग) से सम्पन्न हों, उन्हें चाहिए कि वे राजा (जगन्नाथ) को ऐसे उपायों द्वारा प्रबुद्ध करें कि वह स्वयं यथार्थ रूप से सचेत, सजग एवं सुनीति-सम्पन्न हो जाए। 'बोधयेत्' का अर्थ केवल ज्ञान देना नहीं, बल्कि राजा की सुप्त प्रज्ञा को जागृत करना है—क्योंकि कभी-कभी राजा विषय-वासना, भ्रष्ट सलाह, अहंकार या मोह के कारण अपने कर्तव्य से विमुख हो जाता है। मंत्रियों का प्रमुख धर्म है कि वे राजा के भीतर विवेक-रूपी सूर्य को उदित करें।

दार्शनिक विवेचन

यह 'बोध-दर्शन' (Epistemology of Awakening) का राजनयिक अनुप्रयोग है। भारतीय दर्शन में 'बोध' चेतना की वह अवस्था है, जहाँ अज्ञान (अविद्या) का नाश होता है। यहाँ राजा के 'जगन्नाथ' होने का तात्पर्य है—वह समाज का 'चैतन्य-केन्द्र' (Consciousness Centre) है। मंत्री उस परमचेतना के 'उपाधि-विशेष' (जैसे इन्द्रियाँ या मन) का कार्य करते हैं। जब मंत्री 'धी' (विवेक) से राजा का अहं-तिमिर दूर करते हैं, तो वह 'संबुध्येत'—आत्म-प्रकाशित होता है। यह 'प्रबोधन-नीति' (Pedagogy of Governance) है—शासक का पुनर्निर्माण उसके मन्त्रियों के सामूहिक ज्ञान-प्रयोग से होता है, जैसे प्लेटो के 'अकादमी' में शासक-शिक्षण का विधान है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक युग में इसे 'टीम-लीडरशिप डेवलपमेंट' एवं 'मार्गदर्शन-तन्त्र' (Mentorship) कहा जाता है। किसी संगठन में उच्च-पदस्थ अधिकारी की 'ब्लाइंड स्पॉट' को उसकी टीम द्वारा स्पष्ट किया जाना (Constructive Feedback) इसी बोध-क्रिया का आधुनिक रूप है। 'धी' = क्रिटिकल थिंकिंग; 'सत्त्व' = नैतिक साहस (Moral Courage); 'उद्योग' = निरन्तर नवाचार एवं कार्यशैली (Agile Execution)। आज 'कोचिंग' और '360-डिग्री फीडबैक' के माध्यम से शीर्ष-नेतृत्व को जागृत किया जाता है।

श्लोक ४२ (उत्पथगामी राजा को रोकने वाले ही सच्चे सुहृद् एवं गुरु)

श्लोक
नृपस्य ते हि सुहृदस् त एव गुरवो मताः । य एनम् उत्पथगतं वारयन्त्य् अनिवारिताः ॥४२॥

IAST
nṛpasya te hi suhṛdas ta eva guravo matāḥ | ya enam utpathagataṃ vārayanty anivāritāḥ ||42||

शब्दार्थ
- **नृपस्य** – राजा के
- **ते** – वे
- **हि** – निश्चय ही
- **सुहृदः** – सच्चे मित्र / हितैषी
- **त एव** – वे ही
- **गुरवः** – गुरु / पूजनीय-शिक्षक
- **मताः** – माने जाते हैं
- **ये** – जो
- **एनम्** – इस (राजा) को
- **उत्पथगतम्** – कुमार्गगामी / अधर्म-मार्ग पर जाते हुए

• **वारयन्ति** – रोकते / निवारण करते हैं
• **अनिवारिताः** – बिना किसी भय / बिना किसी रुकावट के (निःसंकोच)

भावार्थ
राजा के जो सहायक या मित्र बिना किसी भय, स्वार्थ या संकोच के (अनिवारिताः) राजा को कुमार्ग (उत्पथ) पर जाते हुए रोकते हैं, वे न केवल उसके सच्चे मित्र (सुहृद्) हैं, अपितु वे ही उसके वास्तविक गुरु माने जाते हैं। सामान्य मित्रता प्रशंसा और सुखद-संगति पर आधारित होती है, किन्तु सच्चा हितैषी वही है जो राजा के हित के लिए उसका विरोध करने का साहस रखता है, भले ही राजा अप्रसन्न हो। 'अनिवारिताः'—उन्हें कोई रोक-टोक नहीं कर सकती—न तो राजा का क्रोध, न पद-गौरव, न ही अपनी जान की चिन्ता।

दार्शनिक विवेचन

यह 'असत्य-प्रियता' (False Friendship) और 'सत्य-प्रियता' (True Friendship) में भेद करता है। अरस्तू ने मित्रता के तीन प्रकार बताए—सुखार्थ, उपयोगार्थ, और गुणार्थ; यहाँ 'उत्पथ-वारण' गुणार्थ-मित्रता है। भारतीय दार्शनिक परम्परा में 'गुरु' का अर्थ 'गु-कारः अन्धकारः, रु-कारः तन्निरोधकः'—जो अज्ञान-रूपी अन्धकार को दूर करे। यह काण्ट के 'कर्त्तव्य-शास्त्र' से मेल खाता है—कर्तव्य-बुद्धि से किया गया प्रतिरोध ही नैतिक है। इसे प्राचीन भारतीय 'अहित-कथन-वीरता' (सत्याग्रह की आद्य-अवधारणा) भी कह सकते हैं।

आधुनिक संदर्भ

आज के कार्पोरेट एवं प्रशासनिक जगत में 'यस-मैन' (हाँ-कहने वाले) तो बहुत मिल जाते हैं, किन्तु 'डेविल्स एडवोकेट' (विरोध-तर्क देने वाला) अत्यन्त दुर्लभ एवं मूल्यवान है। 'उत्पथगतं वारयन्ति' = कम्पनी में गलत रणनीति, अनैतिक मुनाफा, या सीईओ की अहम-मूलक परियोजना का विरोध करना। 'अनिवारिताः' = 'स्पीक-अप कल्चर'। सुप्रीम कोर्ट, CAG, चुनाव आयोग एवं व्हिसिलब्लोअर आज राज्य-प्रमुख को 'उत्पथ' से रोकने वाले 'गुरु' का कार्य करते हैं।

श्लोक ४३ (अकार्य-वारण करने वाले ही सच्चे गुरु)

श्लोक
सज्जमानम् अकार्येषु सुहृदो वारयन्ति ये । सत्यं न ते हि सुहृदो गुरवो गुरवो हि ते ॥४३॥

IAST
sajjamānam akāryeṣu suhṛdo vārayanti ye | satyaṃ na te hi suhṛdo guravo guravo hi te ||43||

शब्दार्थ
• **सज्जमानम्** – प्रवृत्त / तत्पर होते हुए
• **अकार्येषु** – अनुचित कार्यों / अधर्म-कृत्यों में
• **सुहृदः** – मित्र / हितैषी
• **वारयन्ति** – रोकते हैं
• **ये** – जो
• **सत्यम्** – सत्य तो यह है
• **न** – नहीं
• **ते** – वे
• **सुहृदः** – (सामान्य) मित्र नहीं
• **गुरवः** – गुरु हैं

- **गुरवः** – (पुनः आग्रहार्थ) सच्चे गुरु
- **हि** – निश्चित रूप से
- **ते** – वे ही

भावार्थ
जो मित्र (सुहृदः) राजा को अकार्य (अनुचित, अधर्मपूर्ण, हानिकारक कार्यों) में प्रवृत्त होते हुए देखकर उसे तुरन्त रोक देते हैं, उनके विषय में सत्य यह है कि वे सामान्य मित्र नहीं, अपितु वे गुरु ही हैं, सच्चे गुरु ही हैं। पूर्व श्लोक की तुलना में यहाँ 'सुहृद' शब्द का विशेष उल्लेख करके कामन्दक कहते हैं कि जिसे आप मित्र समझते हो, यदि वह आपको बुरे काम से रोके तो उसका स्थान 'गुरु' से भी ऊँचा होता है। 'गुरवो गुरवः' की पुनरुक्ति उस भावना पर बल देती है कि ऐसे प्रतिरोधी-मित्र अत्यन्त दुर्लभ, श्रद्धेय एवं वन्दनीय हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह 'नैतिक-मित्रता का सिद्धान्त' (Doctrine of Moral Friendship) प्रस्तुत करता है। मनुस्मृति और शुक्रनीति में 'सुहृद्' को 'शुभ-हित-उपदेशक' कहा गया है। 'अकार्य-वारण' एक 'प्रतिबन्धात्मक-नीति' (Corrective Ethics) है। यहाँ 'गुरु' शब्द परम्परा से परे है—गुरु वह है जो राजा के 'अहं' को चोट पहुँचाकर भी उसके 'स्व' (आत्म-कल्याण) को बचाता है। यह 'अप्रिय-सत्य' (Unpleasant Truth) की शास्त्रीय महिमा है—वेदों में 'सत्यमेव जयते' है, किन्तु यहाँ 'सत्य' के साथ 'अप्रियोक्ति' को भी कर्तव्य माना गया है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक मनोविज्ञान एवं प्रबन्धन-शास्त्र में इस गुण को 'टफ लव' (कठोर-प्रेम) या 'रैडिकल कैंडर' (Radical Candor) कहते हैं। कम्पनी में यदि कोई सीनियर कर्मचारी अपने बॉस को गलत फैसला लेते देखता है और उसे रोकता है, तो वह 'गुरु' है, 'चापलूस' नहीं। आज 'सत्यं वद' की संस्कृति को 'पारदर्शी संचार' (Transparent Communication) कहा जाता है। सरकारी तन्त्र में CAG और वित्त-आयोग भी राज्य-प्रमुख को अकार्य-व्यय एवं असंवैधानिक नीतियों से रोकने हेतु 'गुरु' की भूमिका निभाते हैं।

श्लोक ४४ (राग से विद्वान भी प्रभावित)

श्लोक
कृतविद्योऽपि बलिना व्यक्तं रागेण रज्यते । रागोपरक्तचित्तः सन् किं न कुर्याद् असाम्प्रतम् ॥४४॥

IAST
kṛtavidyo'pi balinā vyaktaṃ rāgeṇa rajyate | rāgoparaktacittaḥ san kiṃ na kuryād asāmpratam ||44||

शब्दार्थ
- **कृतविद्यः** – विद्या-प्राप्त (बहुश्रुत / शिक्षित)
- **अपि** – भी
- **बलिना** – प्रबल / शक्तिशाली
- **व्यक्तम्** – स्पष्ट / प्रत्यक्ष
- **रागेण** – आसक्ति / मोह / वासना / पक्षपात से
- **रज्यते** – रँगा जाता है / प्रभावित होता है
- **रागोपरक्तचित्तः** – राग से आच्छन्न (पूर्ण-प्रभावित) चित्त वाला
- **सन्** – होकर

• **किम्** – क्या (ऐसा क्या)
• **न कुर्यात्** – नहीं करेगा
• **असाम्प्रतम्** – अनुचित / अयोग्य / असंगत कार्य

भावार्थ
यद्यपि कोई मनुष्य अत्यन्त विद्वान हो (कृतविद्यः), तो भी वह प्रबल राग (मोह, अत्यधिक आसक्ति, इन्द्रिय-विषय-वासना, या स्वजन-पक्षपात) से स्पष्टतः रँगा (प्रभावित) हो जाता है। जब उसका चित्त राग से पूर्णतया आवृत हो जाता है, तो फिर वह कौन-सा अनुचित (असाम्प्रतम्) कार्य नहीं कर बैठता?—अर्थात् वह हर प्रकार का अधर्म, अन्याय, भ्रष्टाचार या मूर्खतापूर्ण निर्णय कर सकता है। राजा या मंत्री, दोनों ही 'विद्वान' होने पर भी 'राग' से ग्रस्त होकर विवेक खो बैठते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह 'काम-वासना' (Desire) की सर्व-व्यापी शक्ति का विश्लेषण है। गीता (२.६२-६३) में कहा गया है—ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गः तेषूपजायते... क्रोधात् भवति सम्मोहः। यहाँ 'राग' वह 'सङ्ग' है, जो ज्ञानी को भी विवेकहीन बना देता है। दार्शनिक रूप से, राग 'अविद्या' (Ignorance) की वृत्ति है; यह आत्म-साक्षात्कार में बाधक है। 'कृतविद्यः' होने का अर्थ केवल शास्त्र-पारायण नहीं; आत्म-निग्रह का अभाव होने पर विद्या निरर्थक हो जाती है। प्लेटो का 'अश्व-रथक' (कामना-रूपी घोड़ा) भी इसी तथ्य को दर्शाता है कि विवेक (सारथि) को नियंत्रित करना अत्यन्त दुष्कर है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक मनोविज्ञान एवं व्यवहार-अर्थशास्त्र (Behavioural Economics) में इसे 'इमोशनल बायस' (Emotional Bias) और 'कॉग्निटिव डिस्टोर्शन' कहते हैं। उच्च-शिक्षित सीईओ भी 'राग' (जैसे अहंकार, पसंदीदा कर्मचारी के प्रति पक्षपात, या स्टॉक-मार्केट में लालच) के कारण भारी गलतियाँ करते हैं (एनरॉन घोटाला, सबप्राइम संकट)। आज 'साइकोमेट्रिक परीक्षण' एवं 'इमोशनल इंटेलिजेंस (EQ)' का मूल्यांकन इसलिए किया जाता है, क्योंकि राग-नियंत्रण ही उच्च-पदस्थ हेतु मुख्य मापदण्ड है।

श्लोक ४५ (राग-ग्रस्त दृष्टि और विनय-रूपी औषधि)

श्लोक
पश्यन्न् अपि भवत्य् अन्धः पुमान् रागावृतेक्षणः । सुहृद्वैद्याश् चिकित्सन्ति निर्मलैर् विनयाञ्जनैः ॥४५॥

IAST
paśyann api bhavaty andhaḥ pumān rāgāvṛtekṣaṇaḥ | suhṛdvaidyāś cikitsanti nirmalair vinayāñjanaiḥ ||45||

शब्दार्थ
• **पश्यन्** – देखते हुए / आँखें होते हुए
• **अपि** – भी
• **भवति** – हो जाता है
• **अन्धः** – अंधा / विवेक-शून्य
• **पुमान्** – मनुष्य
• **रागावृतेक्षणः** – राग से आच्छन्न (ढकी हुई) दृष्टि वाला
• **सुहृद्वैद्याः** – सुहृद् (मित्र) ही वैद्य (चिकित्सक) हैं
• **चिकित्सन्ति** – चिकित्सा / उपचार करते हैं

• **निर्मलैः** – स्वच्छ / पवित्र / निष्पाप
• **विनयाञ्जनैः** – विनय (नम्रता / अनुशासन) रूपी अञ्जन (आँखों की दवा) से

भावार्थ
जिस मनुष्य की आँखें राग (मोह/वासना/आसक्ति) से ढकी हुई हैं, वह देखते हुए भी वस्तुतः अंधा हो जाता है—उसे सत्य, न्याय, और हानि-लाभ का ज्ञान नहीं रहता। ऐसी दशा में, सच्चे मित्र ही वैद्य (चिकित्सक) होते हैं, जो निर्मल (शुद्ध, निष्कपट) विनय-रूपी अञ्जन द्वारा राजा के राग-रूपी नेत्र-रोग को दूर करते हैं। 'विनय' (शिष्टता, अनुशासन, विनम्रता) ही वह औषधि है जो राग-जन्य मोह को नष्ट करती है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'मोह-निवृत्ति' (Removal of Delusion) का सुन्दर रूपक है। 'रागावृतेक्षणः'—जैसे पतंगे आग पर अंधी होकर गिरती हैं, वैसे ही मनुष्य राग में पड़कर स्पष्ट विनाश को नहीं देख पाता। 'विनय' को 'अञ्जन' (औषधि) कहना अत्यन्त सूक्ष्म दार्शनिकता है—अञ्जन नेत्र को प्रकाश-ग्राही बनाता है; इसी प्रकार विनय राग-रूपी मल को हटाकर 'विवेक-दृष्टि' को पुनः कार्यशील करता है। 'सुहृद्-वैद्य'—मित्र को डॉक्टर के समकक्ष रखा गया है; चिकित्सक रोगी को कड़वी दवा देता है, वैसे ही मित्र राजा को 'अप्रिय-सत्य' सुनाता है। यह 'पर-हित-प्रेरित प्रतिबन्ध' है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक नेतृत्व विकास में इसे 'आइडिया-टू-एक्शन गैप' (कोलंबिया स्पेस शटल दुर्घटना) और 'कॉग्निटिव डिसोनेंस' कहा जाता है। 'सुहृद्वैद्याः' = आज के 'मेंटर' (Mentor), 'सेफ-गार्ड', या 'इंडिपेंडेंट डायरेक्टर' जो सीईओ को उसके 'ब्लाइंड स्पॉट' से अवगत कराते हैं। 'विनयाञ्जन' = 'कोचिंग सेशन' तथा '360-डिग्री फीडबैक' जो विनम्रता एवं आत्म-अवलोकन के माध्यम से नेता की दूषित धारणाओं को सुधारते हैं। व्हिसिलब्लोअर और ऑम्बुड्समैन भी 'सुहृद्-वैद्य' हैं।

श्लोक ४६ (राग-मान-मदान्ध राजा को मंत्री-सहारा)

श्लोक
रागमानमदान्धस्य स्खलतः पृथिवीपतेः । हस्तावलम्बो भवति सुहृत्सचिवचेष्टितम् ॥४६॥

IAST
rāgamānamadāndhasya skhalataḥ pṛthivīpateḥ | hastāvalambo bhavati suhṛtsacivaceṣṭitam ||46||

शब्दार्थ
• **राग** – आसक्ति / मोह
• **मान** – मिथ्या-गौरव / अभिमान
• **मद** – नशा / उन्माद / अहंकार
• **अन्धस्य** – अंधे (विवेक-हीन) हुए
• **स्खलतः** – ठोकर खाते / गिरते / गलती करते
• **पृथिवीपतेः** – पृथ्वी-पति (राजा) की
• **हस्तावलम्बः** – हाथ पकड़कर सहारा देना
• **भवति** – होता है
• **सुहृत्** – मित्र / हितैषी
• **सचिव** – मंत्री / सलाहकार
• **चेष्टितम्** – प्रयत्न / क्रिया / आचरण

भावार्थ
जब राजा राग (मोह), मान (अभिमान) और मद (अहंकार-नशा) से अन्धा होकर स्खलित (नीति-पथ से फिसल) जाता है, तो उसके सचिव (मंत्री) एवं सुहृद् (हितैषी) का प्रयत्न ही उसके लिए हस्तावलम्ब (सहारे का हाथ) होता है। जिस प्रकार कोई अंधा या मदहोश व्यक्ति गिरने पर किसी चतुर मित्र का हाथ पकड़कर फिर से खड़ा हो जाता है, उसी प्रकार राजा जब 'राग-मान-मद' के कारण असंगत नीतियाँ अपनाने लगता है, तो मंत्री उसके कुमार्ग-पतन को रोकते हैं। यह 'सहारा' शारीरिक नहीं, वरन् नैतिक, बौद्धिक एवं प्रशासनिक सहायता है।

दार्शनिक विवेचन

'राग, मान, मद'—ये तीनों 'अरिषड्वर्ग' (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य) में सम्मिलित हैं। 'मान' (अभिमान) और 'मद' (अहंकार) राजा को सर्वाधिक दुर्बल बनाते हैं। 'हस्तावलम्ब'—यह शब्द 'आश्रय-दर्शन' (Philosophy of Refuge) को द्योतित करता है। संसार में कोई भी स्वावलम्बी नहीं; सबको किसी-न-किसी आधार की आवश्यकता होती है। राजा के लिए वह आधार उसका मंत्रि-मण्डल है। यह सुकरात के 'मैउटिक्स' (आत्म-ज्ञान-प्रसव-कला) से तुलनीय है, जहाँ विवेक-जागरण ही सहारा है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक समय में 'राग' = व्यक्तिगत स्वार्थ; 'मान' = इगो (अहं); 'मद' = सत्ता का नशा (Power Hubris)—ये तीनों किसी भी नेता को 'स्खलित' कर देते हैं (एनरॉन, वोल्क्सवैगन एमिशन गेट)। 'हस्तावलम्ब' = सलाहकार-मण्डल (Advisory Board) या 'बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स' का हस्तक्षेप, जो गलत रणनीति पर रोक लगाता है। आज 'क्राइसिस मैनेजमेंट' में 'सुहृत्सचिव' (जन-सम्पर्क अधिकारी, कानूनी सलाहकार) ही नेता को मीडिया-आक्रमण एवं कानूनी फंसाव से बचाते हैं।

श्लोक ४७ (मदान्ध राजा के नेता निंदा के भागी)

श्लोक
मदोद्धतस्य नृपतेः सङ्कीर्णस्येव दन्तिनः । गच्छन्त्य् अन्यायवृत्तस्य नेतारः खलु वाच्यताम् ॥४७॥

IAST
madoddhatasya nṛpateḥ saṅkīrṇasyeva dantinaḥ | gacchanty anyāyavṛttasya netāraḥ khalu vācyatām ||47||

शब्दार्थ
• **मदोद्धतस्य** – मद (अहंकार / नशा) से उद्धत (उच्छृंखल / उन्मत्त) हुए
• **नृपतेः** – राजा की
• **सङ्कीर्णस्य** – मद-ग्रस्त / उन्मत्त (गज-विशेषण)
• **इव** – के समान
• **दन्तिनः** – हाथी की
• **गच्छन्ति** – जाते हैं / प्राप्त होते हैं
• **अन्यायवृत्तस्य** – अन्याय-पूर्ण आचरण वाले की
• **नेतारः** – नेता / मार्ग-दर्शक / सेनापति / अधिकारी
• **खलु** – निस्सन्देह
• **वाच्यताम्** – निन्दा / आलोचना / दोष-पात्रता के भाजन

भावार्थ
जो राजा मद (अहंकार, सत्ता-नशा, उन्माद) से उद्धत हो जाता है, वह उस मद-ग्रस्त हाथी (सङ्कीर्ण दन्ती) के समान होता है, जो बिना नियन्त्रण के इधर-उधर भागता-तोड़ता है। ऐसे अन्याय-पूर्ण आचरण वाले राजा के नेता (अधिकारी, मंत्री, सेनापति) निस्सन्देह वाच्यता (लोक-निन्दा, दोषारोपण, बदनामी) को प्राप्त होते हैं। यदि राजा पाप-पथ पर चलता है, तो दोष केवल राजा को नहीं, बल्कि उसके नेताओं (मंत्रियों) को भी लगता है, क्योंकि वे राजा को रोकने में असफल रहे। जैसे मद-ग्रस्त हाथी के साथ उसका महावत भी आलोचित होता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'सामूहिक-उत्तरदायित्व' (Collective Responsibility) के दार्शनिक आधार को स्पष्ट करता है। 'सङ्कीर्ण' शब्द हाथी की उस अवस्था का वाचक है, जब वह 'मद-जल' से मस्त होकर विध्वंसक हो जाता है। राजा का 'मद' केवल उसका व्यक्तिगत दोष नहीं; यह उसके 'नेतृत्व-तन्त्र' (Leadership System) का दोष है। 'वाच्यता' (बदनामी) का दार्शनिक अर्थ—'लोक-यात्रा' (Social Censure) का भय है; यह समाज-दर्शन में 'सार्वजनिक निर्णय' का उपकरण है। यह 'नैतिक-प्रतिबिम्ब' (Moral Reflection) का सिद्धान्त है—यदि आप किसी अन्यायी का साथ देते हैं (चुप रहकर भी), तो आप उसके दोष के भागी बनते हैं।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक लोकतन्त्र में इसे 'मंत्रिमण्डलीय सामूहिक-उत्तरदायित्व' (Cabinet Collective Responsibility) कहा जाता है। यदि प्रधानमंत्री कोई अन्यायपूर्ण कानून लागू करता है, तो विपक्ष उसके सभी मन्त्रियों को दोषी ठहराती है। 'मदोद्धत' राजा = 'राउडी नेता' या 'निरंकुश सीईओ'; ऐसी स्थिति में कम्पनी का बोर्ड भी बदनामी झेलता है। 'सङ्कीर्णस्य दन्तिनः' का आधुनिक रूपक—'राजनीतिक-हाथी' (शक्ति-सम्पन्न नेता) को 'संवैधानिक-अंकुश' (न्यायपालिका, मीडिया, चुनाव-आयोग) द्वारा रोका जाना चाहिए।

श्लोक ४८ (भूमि-गुणों से राज्य-वृद्धि)

श्लोक
भूगुणैर् वर्धते राष्ट्रं तद्वृद्धिर् नृपवृद्धये । तस्माद् गुणवतीं भूमिं भूत्यै नृपतिर् आवसेत् ॥४८॥

IAST
bhūguṇair vardhate rāṣṭraṃ tadvṛddhir nṛpavṛddhaye | tasmād guṇavatīṃ bhūmiṃ bhūtyai nṛpatir āvaset ||48||

शब्दार्थ
- **भूगुणैः** – भूमि के गुणों / विशेषताओं से
- **वर्धते** – बढ़ता है / विकसित होता है
- **राष्ट्रम्** – राज्य / जनपद
- **तद्वृद्धिः** – उस (राष्ट्र) की वृद्धि
- **नृपवृद्धये** – राजा की वृद्धि / समृद्धि के लिए
- **तस्मात्** – इसलिए
- **गुणवतीम्** – गुण-युक्त / उत्तम
- **भूमिम्** – भूमि को
- **भूत्यै** – समृद्धि / उन्नति के लिए

• **नृपतिः** – राजा
• **आवसेत्** – निवास / स्थापना करे (शासन करने हेतु)

भावार्थ
राज्य (राष्ट्र) की उन्नति भूमि के गुणों (उर्वरता, जल-स्रोत, खनिज, जलवायु) पर निर्भर करती है; जैसे-जैसे राष्ट्र समृद्ध होता है, वैसे-वैसे राजा की समृद्धि भी बढ़ती है (क्योंकि उसे अधिक कर, सेना, जन-शक्ति एवं प्रतिष्ठा मिलती है)। इसलिए राजा सदैव गुणवती भूमि (उपजाऊ, सुरक्षित, सम्पन्न प्रदेश) को ही अपना निवास-स्थान एवं शासन-केन्द्र बनाए। 'आवसेत्' का तात्पर्य केवल रहना नहीं, बल्कि दीर्घकालिक नीति-निर्धारण एवं प्रशासन-व्यवस्था स्थापित करना है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'भू-दर्शन' (Geography as Destiny) को प्रतिष्ठापित करता है। भारतीय दर्शन में 'पृथ्वी' को माता एवं 'राष्ट्र' को उसकी सन्तान माना गया है। राजा का कल्याण 'लोक-कल्याण' में निहित है, और लोक-कल्याण भूमि-गुणों से आरम्भ होता है। 'भूगुणैः वर्धते राष्ट्रम्'—यह 'भौतिकवादी-इतिहास-दृष्टि' (Materialist view of history) की प्राचीन अभिव्यक्ति है। 'नृपवृद्धिः'—राजा की समृद्धि को राष्ट्र-वृद्धि पर आश्रित कहना 'सेवा-सिद्धान्त' (Principle of Stewardship) को द्योतित करता है—राजा भूमि का स्वामी न होकर उसका रक्षक है। यह अरस्तू के 'पोलिस' सिद्धान्त से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक अर्थशास्त्र एवं भू-राजनीति का मूल सिद्धान्त 'प्राकृतिक-संसाधन सम्पन्नता' (Natural Resource Endowment) इसी पर आधारित है। 'गुणवती भूमि' = कृषि-योग्य भूमि, जल-स्रोत, खनिज-भण्डार, जैव-विविधता। आज जो देश भूगोल-गुणों से सम्पन्न हैं (अमेरिका, ब्राजील, भारत) उनकी अर्थ-व्यवस्था कृषि-उद्योग-खनिज त्रिकोण पर टिकी है। 'नृपतिर् आवसेत्' = आधुनिक राज्य-प्रमुख अपनी राजधानी का चयन भौगोलिक-सुरक्षा, जल-सुविधा एवं कनेक्टिविटी के आधार पर करता है (नई दिल्ली का ऐतिहासिक चयन)। विकास-नीति में 'भू-उपयोग' एवं 'कृषि-बुनियादी ढाँचा' को प्राथमिकता देना आवश्यक है।

श्लोक ४९ (श्रेष्ठ भूमि के पाँच गुण)

श्लोक
सस्याकरवती पण्यखनिद्रव्यसमन्विता । गोहिता भूरिसलिला पुण्यैर् जनपदैर् वृता ॥४९॥

IAST
sasyākaravatī paṇyakhanidravyasamanvitā | gohitā bhūrisalilā puṇyair janapadair vṛtā ||49||

शब्दार्थ
• **सस्याकरवती** – सस्य (अनाज/फसल) का आकर (खजाना/भण्डार) रखने वाली (उपजाऊ)
• **पण्य** – वाणिज्य / व्यापार-वस्तुएँ
• **खनि** – खानें / खनिज
• **द्रव्य** – धन / सम्पत्ति / वस्तुएँ
• **समन्विता** – युक्त / सम्पन्न
• **गोहिता** – गोवंश (गाय) के लिए हितकर (चारागाह-युक्त)
• **भूरि** – अत्यधिक / बहुत
• **सलिला** – जल (जल-स्रोतों) से युक्त
• **पुण्यैः** – पुण्यशील / धार्मिक / सदाचारी

• **जनपदैः** – जनपदों / प्रजा-समूहों
• **वृता** – घिरी हुई / संयुक्त

भावार्थ
श्रेष्ठ भूमि वह है जो—(१) 'सस्याकरवती'—फसलों एवं कृषि-उत्पादन की अधिकता से भरी हो (अन्न-भण्डार), (२) 'पण्यखनिद्रव्यसमन्विता'—व्यापारिक वस्तुओं, खनिज-सम्पदा (धातु, रत्न, कोयला) एवं धन-सम्पत्ति से युक्त हो, (३) 'गोहिता'—पशु-पालन (विशेषतः गोवंश) के लिए हितकारी चारागाह एवं जल-व्यवस्था हो, (४) 'भूरिसलिला'—प्रचुर जल-स्रोत (नदियाँ, झीलें, कुएँ) हों, (५) 'पुण्यैः जनपदैः वृता'—जहाँ की प्रजा पुण्यशील, धार्मिक, सदाचारी एवं अनुशासित हो। ऐसी भूमि पर शासन करना राजा के लिए समृद्धि का मूल-कारण है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'सम्पूर्ण-समृद्धि के पाँच सूत्र' (Pancha-sutras of Prosperity) प्रस्तुत करता है। 'अन्न, धन, पशु, जल, सज्जन-प्रजा'—ये पाँच तत्त्व 'पृथ्वी-गुण' हैं। 'अन्न' जीवन-धारण का आधार है; 'खनि-द्रव्य' उद्योग एवं व्यापार का; 'गो-हित' कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था का; 'जल' जीवन-रेखा; और 'पुण्य-जनपद' सामाजिक-पूँजी (Social Capital) है। यह 'आधिभौतिक-सम्पदा' (Physical Wealth) और 'आध्यात्मिक-सम्पदा' (Moral Wealth) का समन्वय है—केवल भौतिक संसाधन पर्याप्त नहीं, प्रजा का नैतिक-चरित्र भी आवश्यक है। यह कौटिल्य एवं मनु की 'भू-परीक्षा-विधि' से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'सतत-विकास-लक्ष्य' (SDGs) एवं 'समग्र-विकास-सूचकांक' (Composite Development Index) इसी की प्रतिध्वनि है। 'सस्याकरवती' = खाद्य-सुरक्षा (हरित-क्रान्ति); 'पण्यखनि' = खनिज-सम्पदा एवं प्रसंस्कृत-उद्योग; 'गोहिता' = पशुधन-विकास (सफेद-क्रान्ति); 'भूरिसलिला' = जल-प्रबन्धन (बाँध, सिंचाई-परियोजनाएँ); 'पुण्यैः जनपदैः' = सुशासन-सूचकांक (शिक्षा, स्वास्थ्य, कानून-व्यवस्था)। भारत का 'मेक इन इंडिया', 'डिजिटल इंडिया', 'जल-जीवन मिशन' इन्हीं गुणों को आधुनिक-तकनीकी रूप देने के प्रयास हैं।

श्लोक ५० (भूमि के सौन्दर्यात्मक-सांस्कृतिक गुण)

श्लोक
रम्या सकुञ्जरवना वारिस्थलपथान्विता । अदेवमातृका चेति शस्यते भूर् विभूतये ॥५०॥

IAST
ramyā sakuñjaravanā vāristhalapathānvitā | adevamātṛkā ceti śasyate bhūr vibhūtaye ||50||

शब्दार्थ
• **रम्या** – मनोरम / सुन्दर / आनन्ददायी
• **सकुञ्जरवना** – कुञ्जर (हाथियों) के वनों सहित
• **वारि** – जल
• **स्थल** – भूमि / स्थल-भाग
• **पथ** – मार्ग / सड़कें
• **अन्विता** – से युक्त
• **अदेवमातृका** – देव-स्थानों (मन्दिर, तीर्थ) से युक्त (टीकाकारों के अनुसार 'अ' = 'सहित' अर्थ में; अथवा 'देव-मातृका' से रहित नहीं, वरन् देवालयों से सम्पन्न)

• **च** – और
• **इति** – इस प्रकार
• **शस्यते** – प्रशंसा / सिफारिश की जाती है
• **भूः** – भूमि
• **विभूतये** – समृद्धि / ऐश्वर्य के लिए

भावार्थ
राज्य-समृद्धि के लिए जो भूमि प्रशस्त होती है, वह—(१) 'रम्या'—दृश्य-श्रव्य-सुगन्ध से मनोहर, (२) 'सकुञ्जरवना'—हाथियों के वनों से युक्त (सेना-बल, व्यापार एवं वन-सम्पदा का सूचक), (३) 'वारिस्थलपथान्विता'—जहाँ जल-मार्ग (नदियाँ), स्थल-मार्ग (सड़कें) एवं यातायात के साधन सुव्यवस्थित हों, (४) 'अदेवमातृका'—जहाँ मन्दिर, तीर्थ, देव-स्थान एवं धार्मिक-परम्परा विद्यमान हो—ऐसी भूमि राजा की 'विभूति' (अपार समृद्धि एवं प्रतिष्ठा) के लिए सर्वोत्तम मानी गई है। यह भूमि के 'सौन्दर्यात्मक, पारिस्थितिक, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक'—चारों पक्षों का समन्वय है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'स्थापत्य-दर्शन' (Vastu Philosophy) एवं 'क्षेत्र-महिमा' का आधार है। 'रम्य' = 'अभिरुचि' (Aesthetics) का राजनैतिक महत्व। 'कुञ्जर-वन' वन-सम्पदा एवं जैव-विविधता (Biodiversity) का द्योतक है—जो पारिस्थितिक-संतुलन के लिए आवश्यक है। 'वारि-स्थल-पथ' = 'संचार-व्यवस्था' (Connectivity)—यह राज्य के आर्थिक-सामाजिक-एकीकरण का आधार है। 'अदेवमातृका'—'धर्म-मूलक सांस्कृतिक-पूँजी' (Cultural Capital) है। जहाँ देव-स्थान हैं, वहाँ श्रद्धा, नैतिकता एवं सामाजिक-अनुशासन स्वतः उत्पन्न होता है। यह प्लेटो के 'पवित्र-धर्म-नगर' (Holy City) की अवधारणा से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक युग में इसे 'स्मार्ट-सिटी' (Smart City) एवं 'टिकाऊ-शहरी-विकास' (Sustainable Urban Development) की मूल-अवधारणा कहा जा सकता है। 'रम्या' = 'लाइवेबिलिटी' (हरियाली, स्वच्छ वायु); 'सकुञ्जरवना' = 'इको-टूरिज्म' एवं 'वन्य-जीव-संरक्षण'; 'वारिस्थलपथ' = 'बहु-मोडल परिवहन' (जल-स्थल-वायु मार्गों का एकीकृत-नेटवर्क—सागरमाला, भारतमाला); 'अदेवमातृका' = 'सांस्कृतिक-विरासत' एवं 'धार्मिक-पर्यटन' (वाराणसी, तिरुपति, अमृतसर)। आज 'विभूति' (GDP + Happiness Index) के लिए ये सभी गुण राष्ट्रीय-नीति में प्राथमिकता-प्राप्त विषय हैं।

श्लोक ५१ (अश्रेष्ठ भूमि-लक्षण)

श्लोक
सशर्करा सपाषाणा साटवी नित्यतस्करा ।रूक्षा सकण्टकवना सव्याला चेति भूर् अभूः ॥५१॥

IAST
saśarkarā sapāṣāṇā sāṭavī nityataskarā | rūkṣā sakaṇṭakavanā savyālā ceti bhūr abhūḥ ||51||

शब्दार्थ
• **सशर्करा** – कंकड़-युक्त / बजरीली
• **सपाषाणा** – पत्थर-युक्त / पथरीली
• **साटवी** – वन/जंगल-युक्त
• **नित्यतस्करा** – सदा चोरों/डाकुओं से पीड़ित

• **रूक्षा** – खुरदरी / अनुपजाऊ / शुष्क
• **सकण्टकवना** – काँटेदार वन-युक्त
• **सव्याला** – सर्प/मृग/हिंसक-जन्तुओं-युक्त
• **भूः** – भूमि
• **अभूः** – अशुभ / राज्य-समृद्धि के अयोग्य

भावार्थ
त्याज्य भूमि के गुण—जो भूमि कंकड़-पत्थरों, घने जंगलों, नित्य डाकुओं, ऊसर-रूक्षता, काँटेदार वन-झाड़ियों तथा सर्प-सिंह आदि व्याल-जन्तुओं से युक्त हो, वह राज्य-निर्माण के लिए अशुभ एवं अनुपयुक्त है। ऐसे स्थान पर न तो खेती होती है, न व्यापार, न सुरक्षा—अतः वहाँ बसना और राज्य-स्थापना उचित नहीं। प्रकृति-सम्पत्ति का पहला आधार भूमि है; यदि भूमि ही अयोग्य हो तो राज्य के अन्य अंग—कोश, दुर्ग, सेना—सब निष्फल हैं।

दार्शनिक विवेचन

यहाँ भूमि-परीक्षा का प्रमाण 'प्रत्यक्ष' (भौतिक-लक्षण) एवं 'आर्थिक-उपयोगिता' को माना गया है। भारतीय चिन्तन में 'भूमि' को 'पृथ्वी-तत्त्व' का प्रतीक माना गया—जो स्थिरता एवं पोषण-शक्ति प्रदान करता है। जो भूमि 'सव्याला' (व्यालों से युक्त) और 'साटवी' (जंगली) हो, वह मानव-संस्कृति के प्रतिकूल है—मानव-निर्मित व्यवस्था की नींव प्राकृतिक-बाधाओं से मुक्त स्थल पर ही खड़ी हो सकती है। यह मानव-भौगोलिक चिन्तन का प्राचीन स्वरूप है, जो हॉब्स (Hobbes) की 'अराजक प्रकृति' से मनुष्य के बाहर निकलने के सिद्धान्त से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'भू-उपयोग नियोजन' (Land-Use Planning) एवं 'क्षेत्रीय विकास' (Regional Development) में यही सिद्धान्त लागू है। 'सशर्करा, सपाषाणा' भूमि निर्माण हेतु खर्चीली एवं कृषि-हीन मानी जाती है। 'नित्यतस्करा' का आधुनिक अर्थ—उच्च-अपराध दर, अशान्ति एवं कानून-विहीन क्षेत्र (जैसे नक्सल-प्रभावित), जिनमें विकास-निवेश घाटे में जाता है। 'सव्याला' वाले क्षेत्रों में आज 'कोर जोन' या 'बफर जोन' मानकर विकास पर प्रतिबन्ध लगाया जाता है। यह श्लोक सिखाता है कि राष्ट्र-निर्माण में भूमि-चयन का पहला सिद्धान्त उसकी भौतिक-सुरक्षा एवं उत्पादक-क्षमता है।

श्लोक ५२ (श्रेष्ठ भूमि-सामाजिक-लक्षण)

श्लोक
स्वाजीव्यो भूगुणैर् युक्तः सानूपः पर्वताश्रयः । शूद्रकारुवणिक्प्रायो महारम्भकृषीवलः ॥५२॥

IAST
svājīvyo bhūguṇair yuktaḥ sānūpaḥ parvatāśrayaḥ | śūdrakāruvaṇikprāyo mahārambhakṛṣīvalaḥ ||52||

शब्दार्थ
• **स्वाजीव्यः** – जहाँ लोगों की स्वयं की आजीविका (कृषि/पशुपालन) सुगम हो
• **भूगुणैः युक्तः** – पूर्वोक्त (उपजाऊ, जलयुक्त) भूमि-गुणों से युक्त
• **सानूपः** – सानूप (जल-समीप, घास-स्थल, आर्द्र भूमि) प्रधान
• **पर्वताश्रयः** – पर्वतों से घिरा हुआ / पर्वतीय-आश्रय
• **शूद्रकारुवणिक्प्रायः** – जहाँ शूद्र, कारीगर (शिल्पी), वणिक् (व्यापारी) अधिक हों
• **महारम्भकृषीवलः** – जहाँ बड़े पैमाने पर कृषि करने वाले किसान हों

भावार्थ
श्रेष्ठ जनपद वह है जिसकी भूमि 'भूगुणों' (उर्वरा, सजल, सुगम्य) से सम्पन्न हो, जहाँ सानूप (नदी-तटीय एवं घास-क्षेत्र) तथा पर्वत-आश्रय (सुरक्षा-दृष्टि से) हो, और जहाँ शूद्र (श्रमजीवी), कारु (शिल्पकार), वणिक् (व्यापारी) तथा वृहत्-कृषक बहुसंख्या में हों। इन तीनों वर्गों की प्रधानता अर्थ-चक्र—कृषि, उद्योग, व्यापार—को सुचारु बनाती है, जबकि पर्वतीय-आश्रय सुरक्षा प्रदान करता है। यह सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था (Agriculture + Industry + Trade) का मॉडल है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'आधारभूत आर्थिक-वर्गों का सम्मिलन' दर्शाता है। वर्ण-व्यवस्था को कामन्दक ने कर्म एवं उत्पादन के आधार पर विभाजित किया है—'शूद्र' = श्रम-बल, 'कारु' = कला-कौशल, 'वणिक्' = वितरण-तन्त्र, 'कृषीवल' = खाद्य-उत्पादन। यह 'फिजियोक्रेट्स' (Physiocrats) के सिद्धान्त से घनिष्ट है, जो कृषि को अर्थ-व्यवस्था का आधार मानते थे। 'पर्वताश्रय' प्राकृतिक-दुर्ग को सूचित करता है, जो 'सुरक्षा-तत्त्व' का प्रतीक है—यहाँ अरस्तू का 'पोलिस' (बाह्य-सुरक्षा) एवं 'ओइकोनोमिका' (आर्थिक प्रबन्ध) का समन्वय दिखता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'क्लस्टर मॉडल' (Industrial Cluster) और 'एमएसएमई' (MSME) इसी का प्रतिबिम्ब हैं। 'शूद्र' = अकुशल एवं कुशल श्रमिक; 'कारु' = टेक्नीशियन, इंजीनियर, कारीगर; 'वणिक्' = व्यापारी, ई-कॉमर्स, सर्विस-प्रोवाइडर; 'कृषीवल' = कृषि एवं खाद्य-प्रसंस्करण उद्योग। विकासशील देशों में 'ग्रामीण-समृद्धि' की कुंजी इन चारों क्षेत्रों के सह-अस्तित्व में है। 'सानूप' एवं 'पर्वताश्रय' का आधुनिक अर्थ—'जलवायु-अनुकूल' एवं 'भू-रणनीतिक' क्षेत्र हैं।

श्लोक ५३ (सामाजिक-चारित्रिक लक्षण)

श्लोक
सानुरागो रिपुद्वेषी पीडाकरसहः पृथुः । नानादेश्यैः समाकीर्णो धार्मिकः पशुमान् धनी ॥५३॥

IAST
sānurāgo ripudveṣī pīḍākarasahaḥ pṛthuḥ | nānādeśyaiḥ samākīrṇo dhārmikaḥ paśumān dhanī ||53||

शब्दार्थ
• **सानुरागः** – अनुराग-युक्त (नागरिक परस्पर प्रेम-स्नेह वाले)
• **रिपुद्वेषी** – शत्रु-विद्वेषी (बाह्य-शत्रु से द्वेष रखने वाले)
• **पीडाकरसहः** – पीड़ा-सहिष्णु (कष्ट/संकट सहने में समर्थ)
• **पृथुः** – विस्तृत / बहु-आयामी
• **नानादेश्यैः** – विविध देशों / प्रदेशों के लोगों
• **समाकीर्णः** – भरा हुआ / मिश्रित
• **धार्मिकः** – धर्माचरणी / नैतिक
• **पशुमान्** – पशु-धन (गाय, भैंस, अश्व) से सम्पन्न
• **धनी** – धन-सम्पन्न

भावार्थ
आदर्श जनपद के नागरिकों में परस्पर अनुराग, शत्रु के प्रति साझा द्वेष (राष्ट्रीय-एकता), संकट-सहिष्णुता एवं विस्तृतता होनी चाहिए। वहाँ विविध प्रदेशों के लोग मिश्रित रूप से निवास करें (बहुसांस्कृतिकता), सभी धार्मिक (कर्तव्य-परायण) हों, तथा पशुधन एवं धन-सम्पत्ति से सम्पन्न हों। अनुराग से सामाजिक-बन्धन दृढ़ होता है; रिपु-द्वेष से बाह्य-आक्रमण के

विरुद्ध संगठन; सहिष्णुता से संकट-काल में भी राज्य-व्यवस्था नहीं टूटती। 'नानादेश्य-समाकीर्ण'—विविध जातियों, भाषाओं एवं संस्कृतियों का सम्मिलन समृद्धि लाता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'समाज-दर्शन' (Social Philosophy) एवं 'राजनीतिक-व्यवहार' का अद्‌भुत संगम है। 'अनुराग' सामूहिक-चेतना (Collective Consciousness) है—दुर्खाइम (Durkheim) की 'मेकैनिकल सॉलिडैरिटी' से मेल। 'रिपुद्वेष' बाह्य-खतरे से उत्पन्न आन्तरिक-एकता का सूचक है—'इन-ग्रुप बायस' (In-group Bias) का प्राचीन निरूपण। 'नानादेश्य-समाकीर्ण' बहुसांस्कृतिकता (Multiculturalism) को सकारात्मक मानता है। 'धार्मिक' शब्द यहाँ सम्प्रदाय-विशेष नहीं, बल्कि 'ऋत' (Cosmic Order) के प्रति निष्ठा है—राज्य के सभी नागरिक नैतिक-बन्धनों में बद्ध हों।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'नेशन-बिल्डिंग' एवं 'सामाजिक-पूँजी' (Social Capital) की अवधारणा इसी पर आधारित है। 'सानुराग' = सामाजिक-सद्भाव एवं सहिष्णुता; 'रिपुद्वेषी' = बॉर्डर-सिक्योरिटी एवं राष्ट्र-प्रेम; 'नानादेश्यैः समाकीर्णः' = प्रवासी-श्रमिक एवं शहरी-सम्मिश्रण (Urban melting pot); 'पशुमान् धनी' = पशुपालन को 'ब्लू-इकॉनमी' और 'SDGs' के अन्तर्गत रखा गया है। आज के सफल देश (सिंगापुर, कनाडा) बहुसांस्कृतिक, नैतिक-नागरिकता एवं आर्थिक-समृद्धि का ही उदाहरण हैं।

श्लोक ५४ (जनपद-विकास का सूत्र)

श्लोक

ईदृग्जनपदः शस्तोऽमूर्खव्यसनिनायकः । तं वर्धयेत् प्रयत्नेन तस्मात् सर्वं प्रवर्धते ॥५४॥

IAST

īdṛgjanapadaḥ śasto 'mūrkhavyasanināyakaḥ | taṃ vardhayet prayatnena tasmāt sarvaṃ pravardhate ||54||

शब्दार्थ

- **ईदृक्** – इस प्रकार (उपर्युक्त गुणों वाला)
- **जनपदः** – जनपद / प्रदेश
- **शस्तः** – श्रेष्ठ / प्रशंसनीय
- **अमूर्ख** – मूर्ख न हो
- **व्यसनिनायकः** – व्यसन (दुर्व्यसन) में लिप्त नायक/शासक
- **तम्** – उस (जनपद) को
- **वर्धयेत्** – बढ़ाए / संवर्धित करे
- **प्रयत्नेन** – प्रयत्न / उद्योग से
- **तस्मात्** – उस (जनपद-वृद्धि) से
- **सर्वम्** – सब कुछ (राज्य-सम्पत्ति)
- **प्रवर्धते** – बढ़ती है

भावार्थ

उपर्युक्त गुणों (समृद्ध, सुरक्षित, सुसंगठित) से युक्त जनपद ही श्रेष्ठ है; परन्तु इसकी सफलता के लिए उसका नायक (शासक) अमूर्ख (विवेकशील) एवं व्यसन-रहित (मद्य, जुआ, भ्रष्टाचार, काम-व्यसन से दूर) होना अनिवार्य है। राजा को

ऐसे जनपद को प्रयत्नपूर्वक वर्धित (बढ़ाए, उन्नत करे) करना चाहिए—क्योंकि जनपद की वृद्धि ही सभी वस्तुओं (कोश, दुर्ग, सेना) की वृद्धि का मूल कारण है। 'जनपद' ही प्रकृति-सम्पत्ति का केन्द्र-बिन्दु है; एक गुणवान राजा उसे विकसित करे तो सम्पूर्ण राज्य-तन्त्र फल-फूल उठता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'विकास का मूल-सूत्र' है—जनपद (राष्ट्र/प्रजा) ही सबसे बड़ी सम्पत्ति है। 'अमूर्ख' एवं 'व्यसन-रहित'—ये दो गुण नेतृत्व-दर्शन की कसौटी हैं; प्लेटो ने 'दार्शनिक-राजा' के लिए 'ज्ञान-प्रेम' एवं 'संयम' को अनिवार्य माना है। 'तस्मात् सर्वं प्रवर्धते'—यह 'कुल्य-न्याय' (Irrigation metaphor) है—जैसे नहर से सारे खेत सिंचित होते हैं, वैसे जनपद की वृद्धि से समस्त राज्य-अंग अपने-आप बढ़ते हैं। यह आधार-प्रस्तर (Foundation) का दार्शनिक सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक विकास-अर्थशास्त्र में GDP, HDI का आधार जनसंख्या-गुणवत्ता एवं क्षेत्रीय-सम्पदा है। 'अमूर्ख-व्यसनिनायक' = आज साक्षर, दूरदर्शी, भ्रष्टाचार-मुक्त नेतृत्व की आवश्यकता। 'तं वर्धयेत् प्रयत्नेन' = 'सतत विकास', 'मेक इन इण्डिया', 'स्मार्ट-सिटी' योजनाओं का मूल-मन्त्र। 'तस्मात् सर्वं प्रवर्धते'—यह 'मल्टीप्लायर इफेक्ट' (Multiplier Effect) है—जिस क्षेत्र में विकास-निवेश किया जाता है, वहाँ समग्र अर्थ-व्यवस्था उन्नत होती है।

श्लोक ५५ (दुर्ग-निर्माण-स्थल)

श्लोक
पृथुसीममहाखातम् उच्चप्राकारगोपुरम् । समावसेत् पुरं शैलं सरिन्मरुवनाश्रयम् ॥५५॥

IAST
pṛthusīmamahākhātam uccaprākāragopuram | samāvaset puraṃ śailaṃ sarinmaruvanāśrayam ||55||

शब्दार्थ
• **पृथुसीमम्** – विस्तृत सीमा वाला
• **महाखातम्** – बड़ी-गहरी खाई (परिखा) वाला
• **उच्चप्राकारम्** – ऊँची प्राचीर/परकोटा वाला
• **गोपुरम्** – ऊँचे द्वार-गोपुर (प्रवेश-द्वार) वाला
• **समावसेत्** – निवास/स्थापना करे
• **पुरम्** – नगर / दुर्ग
• **शैलम्** – पर्वत पर
• **सरित्** – नदी के किनारे
• **मरु** – मरुस्थल में
• **वन-आश्रयम्** – वन के आश्रय में

भावार्थ
राजा को दुर्ग-नगर की स्थापना विस्तृत सीमा, गहरी खाई, ऊँची दीवार (प्राचीर) तथा सुदृढ़ प्रवेश-द्वार (गोपुर) से युक्त करनी चाहिए। इसका स्थान पर्वत, नदी-तट, मरुस्थल या वन में हो सकता है—ये प्राकृतिक-आश्रय दुर्ग को अभेद्य बनाते हैं। 'पृथुसीमा' (बड़ी परिधि) से शत्रु-सेना के घेरे में असमर्थता; 'महाखात' (गहरी खाई) से दुर्ग-भेदन में कठिनाई; 'उच्चप्राकार' से ऊँचाई का लाभ; 'गोपुर' से प्रवेश-द्वार की सुरक्षा। स्थान-विविधता से तात्पर्य—प्राकृतिक बाधाएँ मानव-निर्मित सुरक्षा से अधिक प्रभावी हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह 'प्राकृतिक-सुरक्षा' (Natural Defence) का दार्शनिक प्रतिपादन है। दुर्ग नगर मानव-निर्मित 'स्थूल-शरीर' है; इसकी प्राचीर 'त्वचा' के समान, खाई 'प्रतिरक्षा-तन्त्र' के समान। जैसे योग में 'आसन' को स्थिर-सुखमय बनाया जाता है, वैसे दुर्ग को स्थिर-अभेद्य बनाना होता है। 'शैल, सरित्, मरु, वन'—ये चारों स्थान 'प्रकृति-तत्त्वों' (पृथ्वी, जल, अग्नि/रेत, वायु/वन) का प्रतीक हैं। दार्शनिक रूप में, राज्य का बाह्य-आवरण (दुर्ग) ब्रह्माण्डीय पञ्च-तत्त्वों से सुरक्षित होना चाहिए। सुन त्ज़ू (Sun Tzu) ने भी 'टेरेन' (भू-आकृति) को युद्ध-जीत का प्रथम सोपान माना है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'राष्ट्रीय-सुरक्षा' एवं 'भू-रणनीति' (Geopolitics) में दुर्ग 'सैन्य-छावनी', 'बॉर्डर-आउटपोस्ट', 'मिसाइल-शेल्टर' के रूप में है। 'पृथुसीमा' = बड़ा 'बफर-ज़ोन' (जैसे LOC); 'महाखात' = बार्बड-वायर, माइन-फील्ड; 'उच्चप्राकार' = रेडार-टावर, ड्रोन-निगरानी; 'गोपुर' = चेक-पोस्ट, बायोमेट्रिक-प्रवेश। 'शैल, सरित्, मरु, वन-आश्रय'—आधुनिक सेनाएँ पर्वतीय-ब्रिगेड (Siachen), नदी-नौसेना, रेगिस्तानी-कोर (राजस्थान) तथा वन-युद्ध-कौशल (गुरिल्ला) का उपयोग करती हैं।

श्लोक ५६ (दुर्ग-सामग्री एवं महत्व)

श्लोक
जलवद् धान्यधनवद् दुर्गं कालसहं महत् । दुर्गहीनो नरपतिर् वाताभ्रावयवैः समः ॥५६॥

IAST
jalavad dhānyadhanavad durgaṃ kālasahaṃ mahat | durgahīno narapatir vātābhravayavaiḥ samaḥ ||56||

शब्दार्थ
• **जलवत्** – जल (पानी) से युक्त
• **धान्यधनवत्** – अन्न (खाद्यान्न) एवं धन से युक्त
• **दुर्गम्** – किला
• **कालसहम्** – दीर्घकाल तक घेराबंदी सहने योग्य
• **महत्** – विशाल
• **दुर्गहीनः** – जिसके पास दुर्ग न हो
• **नरपतिः** – राजा
• **वात-अभ्र-अवयवैः** – बिना बादल की वायु (निर्जल मेघ) के अंशों/समान (अस्थिर, व्यर्थ, शक्तिहीन)
• **समः** – तुल्य

भावार्थ
दुर्ग जल, अन्न और धन से परिपूर्ण, दीर्घकाल तक शत्रु-घेरा सहने में समर्थ (कालसह) एवं विशाल होना चाहिए। राजा के लिए दुर्ग अत्यन्त आवश्यक है—दुर्ग-हीन राजा 'बिना बादल की वायु' के समान होता है (वायु तो है, पर जल-बिना होने से वर्षा नहीं करा सकती; वैसे ही वह राजा शक्ति-विहीन एवं निरर्थक है)। 'जल' जीवन-रेखा है; 'धान्य' दीर्घ-घेरे में पोषण देता है; 'धन' से सेना-वेतन, हथियार-खरीद, मंत्री-पोषण होता है। 'कालसह'—युद्ध-विद्या में 'लम्बी-घेराबंदी' (Siege) ही असली कसौटी है।

दार्शनिक विवेचन

'जल-धान्य-धन' ये तीन 'जीवन-रस' (Prana, Anna, Artha) हैं—जो मानव-अस्तित्व के त्रि-आधार हैं। दार्शनिक रूप में, दुर्ग 'सत्ता-रक्षक' है; बिना रक्षक के शासक 'मेघ-वायु' (शुष्क वायु) है—जो न कृषि कराती है, न जीवन देती है। 'कालसह' 'समय-दर्शन' (Philosophy of Time) से जुड़ा है—शत्रु को समय (काल) परास्त कर सकता है; एक धैर्यवान दुर्ग 'काल' को मित्र बना लेता है। 'दुर्गहीन नरपति'—नीति-शास्त्र का 'आत्म-रक्षा का प्रथम कर्तव्य' (Right to Self-Defence) का प्राचीन स्वरूप है।

आधुनिक संदर्भ

आज 'दुर्ग' का अर्थ 'राष्ट्रीय-सुरक्षा-अवसंरचना' (Strategic Defence Infrastructure) है। 'जलवत्, धान्यधनवत्' = स्ट्रेटेजिक रिजर्व—जल-शुद्धीकरण, अन्न-भण्डार, Defence Budget, ईंधन-भण्डार; 'कालसह' = 'सस्टेनेबल' (जैसे परमाणु-बंकर, भूमिगत-भोजन-भण्डार); 'दुर्गहीन' राजा = वह देश जिसकी सीमाएँ असुरक्षित, जिसके पास 'मिसाइल-शील्ड' या 'साइबर-सुरक्षा' नहीं। यूक्रेन-रूस युद्ध (2022) में देखा गया—जिन शहरों में भूमिगत-शेल्टर एवं खाद्य-भण्डार थे, वे अधिक दिन टिके। भारत का 'परमाणु-छत्र' (Nuclear Triad) एवं 'सामरिक-भण्डार' (Strategic Petroleum Reserves) इसी का आधुनिक रूप है।

श्लोक ५७ (दुर्ग-भेद)

श्लोक
औदकं पार्वतं वार्क्षम् ऐरिणं धान्वनं तथा । शस्तं प्रशस्तमतिभिर् दुर्गं दुर्गोपचिन्तकैः ॥५७॥

IAST
audakaṃ pārvataṃ vārkṣam airiṇaṃ dhānvanaṃ tathā | śastaṃ praśastamatibhir durgaṃ durgopacintakaiḥ ||57||

शब्दार्थ
• **औदकम्** – जल-दुर्ग (जल से घिरा / द्वीप)
• **पार्वतम्** – पर्वतीय-दुर्ग
• **वार्क्षम्** – वन-दुर्ग (वृक्ष/जंगल-आश्रित)
• **ऐरिणम्** – ऐरिण (मृदा/मिट्टी/सूखी भूमि-निर्मित)
• **धान्वनम्** – मरु-दुर्ग (रेगिस्तानी-क्षेत्र)
• **तथा** – तथा
• **शस्तम्** – प्रशंसित / उचित
• **प्रशस्तमतिभिः** – प्रशस्त-बुद्धि (श्रेष्ठ विचारक)
• **दुर्गोपचिन्तकैः** – दुर्ग-चिन्तन-विशेषज्ञों / नीति-वेत्ताओं द्वारा

भावार्थ
दुर्ग के पाँच प्रकार—(१) औदक (जल-दुर्ग—द्वीप या जल-राशि से घिरा), (२) पार्वत (पर्वतीय), (३) वार्क्ष (वन-दुर्ग), (४) ऐरिण (मिट्टी/ईंट-निर्मित पार्थिव-दुर्ग), (५) धान्वन (मरुस्थलीय-दुर्ग)। इनमें से जो भी दुर्ग दुर्ग-विशेषज्ञों (दुर्गोपचिन्तकैः) को शस्त (उत्तम) लगे, राजा को उसका चयन करना चाहिए। 'शस्तं प्रशस्तमतिभिः'—यहाँ 'बहु-मत' (Expert Opinion) का महत्व है; राजा को अपने अकेले-बुद्धि पर नहीं, नीति-विशारदों के सम्मिलित-मत पर दुर्ग-चयन करना चाहिए। प्रत्येक प्रकार के दुर्ग की अपनी विशेषता है—जल-दुर्ग अग्नि-अस्त्रों से सुरक्षित, पर्वतीय ऊँचाई-लाभ, वन-दुर्ग छिपने-हमले में सहायक, मरु-दुर्ग जल-दुर्लभ होने से शत्रु-पीड़ा में।

दार्शनिक विवेचन

यहाँ 'बहुमुखी-रणनीति' (Multi-dimensional Strategy) एवं 'तत्त्व-समन्वय' की दार्शनिकता है। पाँच दुर्ग पाँच महाभूतों (जल, पृथ्वी/पर्वत, वन/वायु, मृदा/पृथ्वी, मरु/अग्नि) से सम्बन्धित हैं—यह राज्य-सुरक्षा को ब्रह्माण्डीय-तत्त्वों से जोड़ता है। 'प्रशस्तमतिभिः'—'विद्वत्परिषद्' (Council of Experts) के महत्व को दर्शाता है; अकेला राजा सर्वज्ञ नहीं हो सकता। 'दुर्ग' मानव-मन की 'संकट-प्रतिरोधक-प्रणाली' (Mind's Defence Mechanism) का स्थूल प्रतीक है—जैसे योग में 'आसन' विभिन्न स्थितियों में स्थिरता सिखाते हैं, वैसे विभिन्न दुर्ग-शैलियाँ विभिन्न भौगोलिक-चुनौतियों के लिए उपयुक्त हैं।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सैन्य-विज्ञान में यह 'टेरेन-बेस्ड डिफेन्स' (भू-आकृति आधारित रक्षा) है—औदक = नौसेना-अड्डा (पोर्ट ब्लेयर); पार्वत = पर्वतीय-ब्रिगेड (सियाचिन); वार्क्ष = गुरिल्ला-युद्ध (वियतनाम, असम-वन); ऐरिण = स्थल-सेना-छावनी (बंकर); धान्वन = रेगिस्तानी-युद्ध (राजस्थान)। 'प्रशस्तमतिभिः'—आज 'थिंक-टैंक' (IDSA, RAND) एवं 'सैन्य-सलाहकार-समिति' की भूमिका है। कोई एक 'दुर्ग-मॉडल' (जैसे 'मैजिनॉट लाइन') सदा असफल रही; इसलिए विशेषज्ञों के बहु-आयामी विश्लेषण से ही सही दुर्ग-नीति निर्धारित होती है।

श्लोक ५८ (दुर्ग-सामग्री एवं सुरक्षा)

श्लोक
जलान्नायुधयन्त्राढ्यं धीरयोधैर् अधिष्ठितम् । गुप्तिप्रधानम् आचार्या दुर्गं समनुमेनिरे ॥५८॥

IAST
jalānnāyudhayantrāḍhyaṃ dhīrayodhairadhiṣṭhitam | guptipradhānam ācāryā durgaṃ samanumemire ||58||

शब्दार्थ
- **जल-अन्न-आयुध-यन्त्र-आढ्यम्** – जल, अन्न, अस्त्र-शस्त्र, एवं युद्ध-यन्त्रों से भरपूर
- **धीरयोधैः** – धीर (स्थिर, वीर, साहसी) योद्धाओं
- **अधिष्ठितम्** – अधिष्ठित / तैनात / सुरक्षित
- **गुप्तिप्रधानम्** – गुप्ति (रक्षा / चौकसी / गोपनीयता) को प्रधान/मुख्य रखने वाला
- **आचार्याः** – आचार्य / विद्वान-विशेषज्ञ
- **समनुमेनिरे** – अनुमोदित / स्वीकृत / माना

भावार्थ
आचार्यों (प्राचीन-विशेषज्ञों) ने उस दुर्ग को उत्तम माना है जो जल, अन्न, अस्त्र, शस्त्र, एवं युद्ध-यन्त्र (शिल्प-यन्त्र) से परिपूर्ण हो, जहाँ धीर (साहसी एवं स्थिरबुद्धि) योद्धा तैनात हों, और जहाँ गुप्ति (गोपनीयता एवं चौकसी) को सर्वोपरि रखा जाता हो। 'यन्त्राढ्य' से तात्पर्य—प्राचीन युद्ध-विधाओं में शिला-यन्त्र, तीर-प्रक्षेपण, मशीनें (रथ, परशुधार) आते हैं। 'गुप्ति-प्रधानम्'—गुप्तचर-व्यवस्था, दुर्ग-द्वारों की तत्परता, रात्रि-पहरा, भेदभाव-रहित जाँच। एक दुर्ग जितना आक्रामक-सज्ज है, उससे अधिक महत्वपूर्ण उसकी आन्तरिक-सुरक्षा (गुप्ति) है।

दार्शनिक विवेचन

'जलान्नायुधयन्त्र' चार 'सुरक्षा-स्तम्भ' हैं—जीवन (जल), पोषण (अन्न), आक्रमण-शक्ति (आयुध), तकनीक (यन्त्र)। 'धीरयोधा'—गीता में 'धीर' उसे कहा जो सुख-दुःख में सम रहे। 'गुप्ति'—'रहस्य-रक्षा' (Mystery/Secrecy)—यह दार्शनिक रूप में 'मौन' (मौनं सम्मतिः) की भाँति रण-नीति का आधार है। दुर्ग केवल भौतिक-दीवार नहीं, वह 'ज्ञान-गुप्ति'

एवं 'चेतना-सतर्कता' का प्रतीक है। यह प्लेटो के 'आदर्श-नगर' में 'गार्डियन्स' की शिक्षा एवं निगरानी व्यवस्था से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सेना के 'लॉजिस्टिक्स' (Logistics) और 'सुरक्षा-चक्र' (Security Matrix) का यह प्राचीन सूत्र है—'जलान्न' = 'आपूर्ति-शृंखला' (Supply Chain); 'आयुधयन्त्र' = मॉडर्न वेपनरी (मिसाइल, ड्रोन, रडार, टैंक, साइबर-यन्त्र); 'धीरयोधाः' = 'स्पेशल फोर्सेज' (NSG, MARCOS, Para SF); 'गुप्तिप्रधानम्' = 'इंटेलिजेंस ब्यूरो' (IB), 'RAW', 'साइबर-सिक्योरिटी'। आज 'गुप्ति' का सबसे बड़ा आधार 'साइबर-सुरक्षा' है—डिजिटल-दुर्ग को हैकिंग से बचाना। यूक्रेन युद्ध में 'स्टारलिंक' एवं 'इलेक्ट्रॉनिक-वारफेयर' इसी 'यन्त्र एवं गुप्ति' का आधुनिक-अवतार है।

श्लोक ५९ (दुर्ग-स्थान-विशेष)

श्लोक
सापसाराणि दुर्गाणि भुवः सानूपजाङ्गलाः । निवासाय प्रशस्यन्ते भूभुजां भूतिम् इच्छताम् ॥५९॥

IAST
sāpasārāṇi durgāṇi bhuvaḥ sānūpajāṅgalāḥ | nivāsāya praśasyante bhūbhujāṃ bhūtim icchatām ||59||

शब्दार्थ
• **सापसाराणि** – अपसार (पीछे हटने/बचने के मार्ग) सहित
• **दुर्गाणि** – किले
• **भुवः** – भूमि / पृथ्वी
• **सानूप-जाङ्गलाः** – सानूप (आर्द्र/घास-क्षेत्र) एवं जांगल (शुष्क/वन-क्षेत्र) वाली
• **निवासाय** – निवास के लिए
• **प्रशस्यन्ते** – प्रशंसित / उत्तम बताई जाती हैं
• **भूभुजाम्** – राजाओं / भू-पालकों
• **भूतिम्** – समृद्धि / ऐश्वर्य
• **इच्छताम्** – इच्छा रखने वालों के लिए

भावार्थ
जिन दुर्गों में 'अपसार' (आपात-कालीन पलायन-मार्ग, गुप्त-निकास) हों, तथा जो भूमि 'सानूप' (जल-समीप, दलदल/घास) और 'जाङ्गल' (शुष्क/खुले-वन)—दोनों प्रकार की हों, वे उन राजाओं के लिए प्रशंसनीय हैं जो समृद्धि (भूति) चाहते हैं। 'अपसार' से युद्ध-पराजय/अत्यधिक-घेरे में राजा एवं सेना को सुरक्षित-स्थानान्तरण का मार्ग मिलता है। 'सानूप-जाङ्गल' का सामीप्य—एक ओर सानूप से जल/चारा मिलता है, दूसरी ओर जांगल से लकड़ी, वन-उत्पाद, शिकार, एवं गुप्त-आश्रय मिलता है। यह दुर्ग भौगोलिक-वैविध्य एवं रणनीतिक-लचीलापन प्रदान करता है।

दार्शनिक विवेचन

'अपसार' अत्यन्त महत्वपूर्ण दार्शनिक-तत्त्व है—यह 'पलायन-नीति' (Strategy of Retreat) है, जो 'भविष्य-रक्षा' के लिए आवश्यक है। नीति-शास्त्र में 'युक्त-पलायन' (Tactical Withdrawal) को बुद्धिमत्ता माना गया है (शिवाजी का 'गुरिल्ला-वारफेयर')। 'सानूप-जाङ्गल' भूमि का मेल—यह 'जीवन-रक्षक द्वन्द्व' का प्रतीक है—एक ओर जल से उत्पादन, दूसरी ओर वन से सुरक्षा। यह 'लोकायत' (भौतिकवादी) दृष्टि है—पूर्णतः प्राकृतिक-साधनों पर आधारित सुरक्षा-व्यवस्था।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सैन्य-रणनीति में 'फॉलबैक पोजीशन' (Fallback Position) एवं 'रिट्रीट प्लान' इसी 'अपसार' का नाम है। सानूप = जल-स्रोत, झील, नदी-क्षेत्र; जाङ्गल = खुले-मैदान, वन-सीमा (जहाँ एयर-स्ट्राइक, मिसाइल-साइलो स्थापित किये जा सकते हैं)। भारत का पूर्वोत्तर (वन) एवं पश्चिमी-सीमा (मरुस्थल/जल) इसी द्वैत का उदाहरण हैं। वियतनाम युद्ध में 'Cu Chi Tunnels' या गाजा में 'सुरंगें'—यह 'अपसार' ही है। सरकारी संरचनाओं (जैसे न्यायालय, संसद) में भी आपात-निकास (Emergency Exit) अनिवार्य किया गया है।

श्लोक ६० (कोश-गुण)

श्लोक
बह्वादानोऽल्पनिःस्रावः ख्यातः पूजितदैवतः । ईप्सितद्रव्यसम्पन्नो हृद्यः स्वाप्तैर् अधिष्ठितः ॥६०॥

IAST
bahvādāno 'lpaniḥsrāvaḥ khyātaḥ pūjitadaivataḥ | īpsitadravyasampanno hṛdyaḥ svāptairadhiṣṭhitaḥ ||60||

शब्दार्थ
- **बह्वादानः** – बहु-आदान (अधिक आय/प्राप्ति) वाला
- **अल्पनिःस्रावः** – अल्प-निःस्राव (कम व्यय/खर्च) वाला
- **ख्यातः** – प्रसिद्ध / विख्यात
- **पूजितदैवतः** – पूजित दैवत (देवताओं/पूर्वजों/धर्म-स्थानों) वाला (धार्मिक-अनुष्ठान यथावत्)
- **ईप्सितद्रव्यसम्पन्नः** – वांछनीय / इच्छित वस्तु-धन से सम्पन्न
- **हृद्यः** – हृदय-ग्राही / मनोहर / सन्तोषप्रद
- **स्वाप्तैः** – स्व-आप्त (विश्वस्त / अपने आत्मीय / सच्चे अधिकारियों)
- **अधिष्ठितः** – अधिष्ठित / स्थापित / नियन्त्रित

भावार्थ
उत्तम कोश (राजकीय-खजाना) वह है जिसमें—(१) अधिक आय (बह्वादान) हो, (२) कम व्यय (अल्पनिःस्राव) हो, (३) वह प्रसिद्ध (ख्यात) हो, (४) देवताओं/पूर्वजों का सम्मान (धर्म-कार्य) नियमित हो, (५) वह वांछित-वस्तुओं से सम्पन्न हो, (६) मनोहर (हृद्य)—कर-दाताओं एवं अमात्यों को सन्तुष्ट करने वाला हो, तथा (७) विश्वस्त (स्व-आप्त) अधिकारियों के अधीन हो। 'अल्पनिःस्राव'—फिजूल-खर्ची, आडम्बर, अनावश्यक-युद्ध से बचना है। कोश का 'हृद्य' होना आवश्यक है—जो प्रजा से कर-संग्रह में कठोर न हो, वरन् सन्तुलित हो। 'स्वाप्त'—कोश-रक्षा में विश्वासघाती नहीं, वरन् परीक्षित/दृढ़-निष्ठ अधिकारी हों।

दार्शनिक विवेचन

यह कोश-गुण 'अर्थ-नीति' (Economics) का दार्शनिक-विवरण है। 'बह्वादान' = 'उत्पादन-उपार्जन' (Revenue Generation); 'अल्पनिःस्राव' = 'मितव्ययिता' (Frugality)—जो सेनेका (Seneca) एवं भारतीय 'अपरिग्रह' से मेल खाता है; 'पूजितदैवतः' = धन का धर्म-संस्कृति में योगदान—'अर्थ को धर्म से जोड़ना'; 'स्वाप्तैः अधिष्ठितः' = 'विश्वास-आधारित-प्रबन्धन' (Trust-based Management)—बिना भ्रष्टाचार-नियन्त्रण के कोश क्षीण हो जाता है। दार्शनिक रूप में, कोश राज्य का 'रक्त-संचार-तन्त्र' (Blood Circulation) है—यदि रक्त (धन) अवरुद्ध या दूषित हो तो राज्य-शरीर (सप्ताङ्ग) नष्ट हो जाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'राज्य-कोष' (Treasury/Finance Ministry) एवं 'केन्द्रीय-बैंक' (RBI/Fed) के सिद्धान्त इसी पर आधारित हैं। 'बह्वादान' = बेहतर कर-संग्रह (Tax Revenue), जीएसटी संग्रह, विदेशी-मुद्रा भण्डार (Forex Reserves); 'अल्पनिःस्राव' = राजकोषीय-अनुशासन (Fiscal Discipline); 'ख्यातः' = सॉवरेन रेटिंग (S&P/Moody's); 'ईप्सितद्रव्यसम्पन्नः' = स्ट्रेटेजिक रिजर्व (तेल, सोना, अनाज); 'हृद्यः' = जन-अपेक्षित बजट; 'स्वाप्तैः अधिष्ठितः' = CAG, भ्रष्टाचार-निरोधक एवं PIL—जो कोश-पारदर्शिता सुनिश्चित करते हैं। आधुनिक आर्थिक-संकटों (महामारी, मुद्रास्फीति) में सफल राष्ट्र वही हैं, जिनका कोश 'बह्वादान' एवं 'अल्पनिःस्राव' का सिद्धान्त अपनाते हैं।

श्लोक ६१ (कोश के गुण—मुक्ता, कनक, रत्न, पैतामह, धर्मार्जित, व्ययसह)

श्लोक

मुक्ताकनकरत्नाढ्यः पितृपैतामहोचितः । धर्मार्जितो व्ययसहः कोशः कोशज्ञसम्मतः ॥६१॥

IAST

muktākanakaratnāḍhyaḥ pitṛpaitāmahocitaḥ | dharmārjito vyayasahaḥ kośaḥ kośajñasammataḥ ||61||

शब्दार्थ

- **मुक्ता** – मोती
- **कनक** – सुवर्ण
- **रत्न** – मणि/रत्न
- **आढ्यः** – सम्पन्न/परिपूर्ण
- **पितृपैतामह** – पिता एवं पितामहों से प्राप्त (पैतृक/परम्परागत)
- **उचितः** – युक्त/उपयुक्त (अनुकूल)
- **धर्मार्जितः** – धर्मपूर्वक अर्जित किया हुआ
- **व्ययसहः** – व्यय (खर्च) को सहन करने में समर्थ
- **कोशः** – कोश/खजाना
- **कोशज्ञ** – कोश-विशेषज्ञ
- **सम्मतः** – जो विशेषज्ञों द्वारा प्रशंसित/अनुमोदित हो

भावार्थ

राज्य का कोश (खजाना) उन्नत एवं समृद्ध होना चाहिए—जो मोतियों, सुवर्ण एवं विविध रत्नों से परिपूर्ण हो। यह पिता एवं पितामहों से चली आ रही परम्परा के अनुकूल (राज-वंश की प्रतिष्ठा के योग्य) होना चाहिए। कोश का संग्रहण धर्मपूर्वक (बिना प्रजा-पीड़न, बिना अधर्म-अन्याय के) किया गया हो—यह अत्यन्त आवश्यक शर्त है, क्योंकि अधर्मार्जित धन राज्य को दीर्घकाल में विनाश की ओर ले जाता है। साथ ही, कोश 'व्ययसह' हो—अकस्मात् युद्ध, दुर्भिक्ष, भूकम्प, महामारी या बड़े निर्माण-कार्यों के भारी खर्च को झेल सकने की क्षमता रखता हो। अन्ततः कोश कोश-विशेषज्ञों (अर्थ-शास्त्रियों एवं वित्त-मन्त्रियों) द्वारा प्रशंसित एवं अनुमोदित होना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह 'अर्थ एवं धर्म का सह-अस्तित्व' दार्शनिक सिद्धान्त प्रस्तुत करता है। कोश 'अर्थ' (भौतिक सम्पन्नता) का प्रतीक है, किन्तु उसका स्रोत 'धर्म' होना चाहिए—यह मीमांसा दर्शन के 'अभ्युदय' (भौतिक उन्नति) एवं 'निःश्रेयस' (आध्यात्मिक

कल्याण) के समन्वय को दर्शाता है। 'पितृपैतामहोचितः'—'परम्परा का प्रमाण' (Authority of Tradition) है; यह मीमांसा के 'शब्द-प्रमाण' से सम्बन्धित है। 'व्ययसहः'—राज्य का आर्थिक तन्त्र 'जीवित-अंग' (Living Organism) है, जिसमें उतार-चढ़ाव सहन करने की क्षमता अनिवार्य है। 'कोशज्ञसम्मतः'—कोश की वास्तविक स्थिति केवल विशेषज्ञों की समीक्षा से ही जानी जा सकती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक अर्थशास्त्र एवं राजकोषीय प्रबन्धन में—'मुक्ता-कनक-रत्नाढ्य' = विदेशी मुद्रा भण्डार (Forex Reserves), स्वर्ण भण्डार (Gold Reserves) एवं राष्ट्रीय निवेश कोष; 'पितृपैतामहोचित' = राजकोषीय अनुशासन एवं राष्ट्रीय ऋण-सीमा; 'धर्मार्जित' = कर-पारदर्शिता (Tax Transparency), श्वेत धन (White Money); 'व्ययसह' = आपातकालीन कोष (PM Cares Fund), SDRF; 'कोशज्ञसम्मत' = वित्त आयोग, मुख्य आर्थिक सलाहकार तथा RBI द्वारा राजकोषीय समीक्षा। आज विश्व-बैंक एवं IMF भी देशों की वित्तीय स्थिरता को इन्हीं मानदण्डों पर परखते हैं।

श्लोक ६२ (कोश-संरक्षण के चार उद्देश्य)

श्लोक
धर्महेतोस् तथार्थाय भृत्यानां भरणाय च । आपदर्थं च संरक्ष्यः कोशः कोशवता सदा ॥६२॥

IAST
dharmahetos tathārthāya bhṛtyānāṃ bharaṇāya ca | āpadarthaṃ ca saṃrakṣyaḥ kośaḥ kośavatā sadā ||62||

शब्दार्थ
- **धर्महेतोः** – धर्म के लिए (यज्ञ-दान-पुण्यार्थ)
- **तथा** – तथा/और
- **अर्थाय** – अर्थ (भौतिक सुख-वैभव) की सिद्धि के लिए
- **भृत्यानाम्** – भृत्यों/मंत्रियों/सैनिकों/नौकर-चाकरों के
- **भरणाय** – पालन-पोषण/वेतन-भत्ता हेतु
- **च** – और
- **आपदर्थम्** – आपत्ति/संकट की स्थिति के लिए
- **संरक्ष्यः** – सुरक्षित रखा जाना चाहिए
- **कोशवता** – कोश-धारी/राजा द्वारा
- **सदा** – सदैव/निरन्तर

भावार्थ
राजा को अपने कोश की सुरक्षा चार उद्देश्यों के लिए सदा करनी चाहिए—(१) धर्म-हेतु—यज्ञ, वेद-पाठ, ब्राह्मण-पोषण, मन्दिर-निर्माण, दान-धर्म आदि कार्यों के लिए, (२) अर्थ-सिद्धि—राज्य के आर्थिक-विकास, व्यापार, कृषि-सुधार, सिंचाई-परियोजनाओं के लिए, (३) भृत्य-भरण—मंत्रियों, सेनानायकों, सैनिकों, लिपिकों एवं समस्त प्रशासनिक-तन्त्र को उचित वेतन, भत्ता एवं सुविधाएँ देने के लिए (अवैतनिक/अल्पवैतनिक भृत्य भ्रष्ट एवं असंतुष्ट हो जाते हैं), (४) आपद-अर्थ—युद्ध, अकाल, महामारी, भूकम्प, विद्रोह या शत्रु-आक्रमण जैसी आपत्तियों के समय तत्काल धन-व्यय करने के लिए। कोश को कभी भी मनमाने ऐश्वर्य या विलास-व्यय में समाप्त नहीं करना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह 'त्रिवर्ग' (धर्म, अर्थ, काम) एवं 'अपवर्ग' की दार्शनिक अवधारणा को राज्य-कोश पर लागू करता है। 'धर्महेतोः' एवं 'अर्थाय'—ये दो प्रमुख पुरुषार्थ हैं; 'भृत्य-भरण' वस्तुतः 'काम' (अभिलाषा-पूर्ति) एवं सामाजिक-व्यवस्था का आधार है; 'आपदर्थम्' मोक्ष/सुरक्षा का संकेत है। कोश केवल भौतिक-साधन नहीं, वरन् 'ऋत' (Cosmic Order) का एक अंश है—यदि राजा कोश का दुरुपयोग करता है तो वह प्राकृतिक-न्याय का उल्लंघन करता है। यह काण्ट (Kant) के 'स्पष्ट अनिवार्यता' (Categorical Imperative) से तुलनीय है—कोश की रक्षा सम्पूर्ण समाज के कल्याण के लिए एक सार्वभौमिक कर्तव्य है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सरकारी वित्त-व्यवस्था में—धर्महेतु = कल्याणकारी योजनाएँ, सामाजिक-न्याय, अनुदान, सांस्कृतिक-धरोहर-रखरखाव (CSR); अर्थाय = बुनियादी ढाँचा, स्मार्ट-सिटी, राष्ट्रीय-राजमार्ग, डिजिटल-इंडिया; भृत्य-भरण = वेतन एवं पेंशन आयोग, सशस्त्र सेना वेतन; आपदर्थम् = NDRF, प्रधानमंत्री राहत कोष, आरक्षित निधि (Reserve Fund)—जिनका उपयोग कोविड, चक्रवात, युद्ध-स्थिति में किया जाता है। आज 'फिस्कल डेफिसिट', 'जीडीपी अनुपात' एवं 'राजकोषीय सुदृढ़ता' (Fiscal Consolidation) इसी श्लोक के आधुनिक पर्याय हैं।

श्लोक ६३ (सेना के पाँच गुण)

श्लोक
पितृपैतामहो वश्यः संहतो दत्तवेतनः । विख्यातपौरुषो जन्यः कुशलः कुशलैर् वृतः ॥६३॥

IAST
pitṛpaitāmaho vaśyaḥ saṃhato dattavetanaḥ | vikhyātapauruṣo janyaḥ kuśalaḥ kuśalair vṛtaḥ ||63||

शब्दार्थ
- **पितृपैतामहः** – पितृ-पैतामही (परम्परागत/वंश-परम्परा से आयी हुई)
- **वश्यः** – वश/अनुशासन में रहने वाली, आज्ञाकारी
- **संहतः** – संगठित / एकत्र / घनीभूत
- **दत्तवेतनः** – दिया हुआ वेतन (नियमित भुगतान वाली)
- **विख्यातपौरुषः** – विख्यात शौर्य/पराक्रम वाली
- **जन्यः** – जननी/जन्म से प्राप्त (क्षत्रिय-समूह)
- **कुशलः** – निपुण/कुशल
- **कुशलैः** – कुशल व्यक्तियों (सेनापतियों) द्वारा
- **वृतः** – घिरी हुई / सेवित

भावार्थ
एक उत्तम सेना (दण्ड/बल) पाँच गुणों से युक्त होती है—(१) पितृपैतामही—राजा की पैतृक विरासत, पूर्वजों द्वारा स्थापित योद्धा-परम्परा; (२) वश्य—अनुशासित एवं आज्ञाकारी; (३) संहत—संगठित, घनीभूत, भिन्न-भिन्न गुटों में बँटी न हो; (४) दत्तवेतन—नियमित एवं समुचित वेतन पाने वाली (अवैतनिक/अल्प-वैतनिक सेना विश्वासघात कर सकती है); (५) विख्यातपौरुष—शौर्य एवं विजय-गाथा के लिए प्रसिद्ध। साथ ही यह सेना 'जन्य' (क्षत्रिय-जाति/वीर-वर्ग से उत्पन्न) हो तथा कुशल सेनापतियों एवं रण-विशेषज्ञों से परिवृत्त (निर्देशित) हो। एक उत्तम सेना अनुशासन, संगठन, आर्थिक सुरक्षा, कीर्ति एवं विशेषज्ञ-नेतृत्व—इन पाँचों स्तम्भों पर खड़ी होती है।

दार्शनिक विवेचन

'पितृपैतामह' होने से सेना में 'ऐतिहासिक-चेतना' (Historical Consciousness) उत्पन्न होती है—योद्धा अपने पूर्वजों के बलिदानों को स्मरण करता है (गीता का क्षत्रिय-धर्म)। 'वश्य' एवं 'संहत'—व्यक्तिगत-अहं को त्यागकर सम्पूर्ण सेना एक 'रूप' (Corporate Body) बन जाती है; यह हेगेल की 'सत्ता की एकता' (Unity of Power) है। 'दत्तवेतन'—यह न्याय-सिद्धान्त (Justice) है; वैतनिक-सेना 'व्यावसायिक' (Professional) होती है। 'विख्यातपौरुष' यश एवं कीर्ति की अभिलाषा है—यह प्लेटो के 'थ्यूमोस' (आत्म-गौरव) से मेल खाती है। 'कुशलैः वृतः'—सेना का 'सार' (Essence) केवल सैनिक नहीं, वरन् उसका बौद्धिक-सेनानायकत्व है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सैन्य-प्रबन्धन में—पितृपैतामह = रेजिमेन्टल परम्परा (भारतीय सेना की सिख, गोरखा, मराठा रेजीमेंट्स); वश्य/संहत = अनुशासन एवं एकीकृत कमान (Integrated Command)—तीनों सेनाओं (थल, जल, वायु) का समन्वय; दत्तवेतन = सैन्य वेतन आयोग (OROP); विख्यातपौरुष = युद्ध-कीर्ति—कारगिल, गलवान; कुशलैः वृतः = सैन्य-अकादमियाँ (NDA, IMA, DSSC)। यह श्लोक आज भी किसी राष्ट्र के 'रक्षा-बजट' एवं 'सैन्य-सुधारों' की आधार-शिला है।

श्लोक ६४ (सेना में विविधता एवं अस्त्र-शस्त्र-पूजा)

श्लोक
नानाप्रहरणोपेतो नानायुद्धविशारदः । नानायोधसमाकार्णो नीराजितहयद्विपः ॥६४॥

IAST
nānāpraharaṇopeto nānāyuddhaviśāradaḥ | nānāyodhasamākarṇo nīrājitahayadvipaḥ ||64||

शब्दार्थ
- **नाना** – अनेक प्रकार के
- **प्रहरण** – अस्त्र/शस्त्र
- **उपेतः** – सहित / युक्त
- **नानायुद्ध** – अनेक प्रकार के युद्ध-कौशल (रण-नीतियाँ)
- **विशारदः** – विशेष रूप से कुशल/पारंगत
- **नानायोध** – अनेक प्रकार के योद्धा (पैदल, अश्व, रथ, गज)
- **समाकार्णः** – समाकीर्ण (परिपूर्ण/व्याप्त)
- **नीराजित** – नीराजन/आरती/अस्त्र-शस्त्रों की पूजा-विधि से शुद्ध/अभिमन्त्रित
- **हय** – घोड़े
- **द्विपः** – हाथी (द्विप = दो पानी पीने वाला)

भावार्थ
सेना अनेक प्रकार के आयुधों (तलवार, भाला, धनुष, शक्ति-प्रक्षेपास्त्र, गदा) से सुसज्जित हो। वह अनेक प्रकार के युद्ध-कौशलों (स्थल-युद्ध, दुर्ग-युद्ध, घात-प्रत्याघात, रात्रि-युद्ध, छापामार, गुरिल्ला) में पारंगत हो—अर्थात् रण-क्षेत्र की प्रत्येक परिस्थिति का सामना करने में सक्षम हो। सेना में अनेक प्रकार के योद्धा (पैदल, घुड़सवार, गज-सवार, रथी, तीरन्दाज) समाकीर्ण हों, जिससे वह बहु-आयामी एवं संतुलित युद्ध-शक्ति प्राप्त कर सके। विशेषतया, सेना के घोड़ों एवं हाथियों का 'नीराजन' (अस्त्र-पूजा, विधि-वत् संस्कार, अभिमन्त्रण) किया गया हो—इससे युद्ध-पशुओं का स्वास्थ्य, मनोबल एवं आध्यात्मिक-सुरक्षा सुनिश्चित होती है।

दार्शनिक विवेचन

सेना को 'सूक्ष्म-ब्रह्माण्ड' (Microcosm) के रूप में प्रस्तुत किया गया है—उसमें सम्पूर्ण युद्ध-कला एवं प्रकृति के विविध अवयव (हय=वायु-तत्व, द्विप=पृथ्वी-तत्व, नानायोध=विविध-मानव-प्रकृतियाँ) समाहित हैं। 'नानाप्रहरण' 'अद्वैत की बहुलता' (Plurality within Unity) है—यह हेराक्लीटस का 'एकता एवं विरोधों का संघर्ष' से तुलनीय है। 'नानायुद्धविशारद'—युद्ध केवल शारीरिक नहीं, वरन् 'बौद्धिक-खेल' है—क्लॉज़विट्ज़ (Clausewitz) का 'युद्ध का चतुराई-पूर्ण रूप' यहाँ दिखता है। 'नीराजन' एक 'अनुष्ठानिक-दर्शन' है—यह सेना को केवल हिंसक-यन्त्र नहीं, वरन् 'धर्म-रक्षक' (Righteous Force) बनाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक युद्ध-व्यवस्था में—नानाप्रहरण = बहु-आयामी हथियार (टैंक, तोपें, राफेल, सुखोई, INS Vikrant, अग्नि-5, ड्रोन, साइबर-हथियार); नानायुद्धविशारद = स्थल-जल-वायु-साइबर-अन्तरिक्ष—पाँचों आयामों में युद्ध-कौशल (भारत का स्पेस कमांड एवं साइबर सुरक्षा बल); नानायोधसमाकीर्ण = सेना के विभिन्न कोर—इन्फैण्ट्री, आर्मर्ड कोर, आर्टिलरी, एयर डिफेंस, कमाण्डो फोर्स; नीराजितहयद्विप = रिपब्लिक डे परेड में युद्ध-सम्पदा का प्रदर्शन; घोड़ों-हाथियों का स्थान आज 'मिलिट्री हेलिकॉप्टर, रडार-प्रणाली एवं हाई-टेक लॉजिस्टिक्स' ने ले लिया है।

श्लोक ६५ (अनुभवी, एकनिष्ठ एवं क्षत्रिय-प्रधान सेना)

श्लोक
प्रवासायासदुःखेषु युद्धेषु च कृतश्रमः । अद्वैध्यः क्षत्रियप्रायो दण्डो दण्डविदां मतः ॥६५॥

IAST
pravāsāyāsaduḥkheṣu yuddheṣu ca kṛtaśramaḥ | advaidhyaḥ kṣatriyaprāyo daṇḍo daṇḍavidāṃ mataḥ ||65||

शब्दार्थ
• **प्रवास** – दूर-दूर अभियान/मार्च
• **आयास** – थकावट/कठिन परिश्रम
• **दुःखेषु** – कष्टों/विपत्तियों में
• **युद्धेषु** – युद्धों में
• **कृतश्रमः** – परिश्रम किया हुआ (अनुभवी/कठोर)
• **अद्वैध्यः** – द्वैध/दो-मन/अनिश्चय-रहित (एकनिष्ठ)
• **क्षत्रियप्रायः** – क्षत्रिय-बहुल / वीर-जाति-प्रधान
• **दण्डः** – सेना/दण्ड
• **दण्डविदाम्** – दण्ड-नीति के जानकारों/विशेषज्ञों द्वारा
• **मतः** – स्वीकृत/अभिमत

भावार्थ
एक आदर्श सेना (दण्ड) वह है जिसने दूर-दराज़ के अभियानों, शारीरिक-मानसिक थकावट, विभिन्न प्रकार के कष्ट तथा प्रत्यक्ष युद्धों में पूर्ण परिश्रम एवं अभ्यास कर लिया हो—अर्थात् वह रण-अनुभवी एवं कठोर (Battle-hardened) हो। वह 'अद्वैध्य' हो—अपने राजा एवं राष्ट्र के प्रति एकनिष्ठ, दो-मन वाली न हो, न ही उसमें देशद्रोह अथवा शत्रु-सहानुभूति की असमंजस-स्थिति हो। वह 'क्षत्रियप्राय' हो—अर्थात् उसमें अधिकांशतः क्षत्रिय (योद्धा-जाति) के लोग हों, या सभी में

क्षत्रियोचित वीरता, स्वाभिमान, आत्म-बलिदान का भाव हो। इस प्रकार की सेना को दण्ड-विशेषज्ञ (राजनीतिज्ञ, सेनानायक) श्रेष्ठ एवं मान्य मानते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह 'तपस्या' (Asceticism) के दार्शनिक सिद्धान्त को युद्ध-क्षेत्र पर लागू करता है—'प्रवास-आयास-दुःख' में श्रम करना योद्धा की तपस्या है। 'अद्वैध्य'—यह 'एकाग्रता' (Ekagrata) का राजनयिक रूप है; जैसे योग-दर्शन में चित्त-वृत्ति का एकाग्र होना आवश्यक है, वैसे ही सेना का संकल्प एक होना चाहिए। 'क्षत्रियप्राय'—यह 'वर्णाश्रम-धर्म' का अनुप्रयोग है; किन्तु दार्शनिक रूप में इसका आशय केवल जाति नहीं, वरन् 'योद्धा-संस्कार' (Martial Ethos) है। यह प्लेटो के 'गार्डियन वर्ग' (Guardian Class) के गुण—साहस, निष्ठा, अनुशासन—से मेल खाता है। 'कृतश्रमः' व्यक्ति को अरस्तू के 'सद्गुण-शील' (Virtue Ethics) के निकट लाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सेना में—प्रवास-आयास-दुःख = सियाचिन पर -५०°C में ड्यूटी, राजस्थान का रेगिस्तान, अरुणाचल के घने जंगल; कृतश्रम = वार्षिक युद्ध-अभ्यास (अभ्यास-शक्ति, वज्र-प्रहार), संयुक्त राष्ट्र शांति-मिशन; अद्वैध्य = राष्ट्र-भक्ति एवं वफादारी (सेना का सेवा-नियम Discipline & Loyalty Oath); क्षत्रियप्राय = आधुनिक 'ऑल-वालंटियर प्रोफेशनल आर्मी'—हालाँकि जाति-आधारित नहीं, किन्तु 'सैन्य-संस्कृति' (साहस, अनुशासन, त्याग) क्षत्रिय-धर्म का आधुनिक स्वरूप है। विशेषज्ञ (जनरल, चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ) आज भी ऐसी सेना को ही 'युद्ध-योग्य' (Battle Ready) मानते हैं।

श्लोक ६६ (मित्र-चयन के आठ गुण)

श्लोक
त्यागविज्ञानसत्त्वाढ्यं महापक्षं प्रियंवदम् । आयतिक्षमम् अद्वैध्यं मित्रं कुर्वीत सत्कुलम् ॥६६॥

IAST
tyāgavijñānasattvāḍhyaṃ mahāpakṣaṃ priyaṃvadam | āyatikṣamam advaidhyaṃ mitraṃ kurvīta satkulam ||66||

शब्दार्थ
- **त्याग** – उदारता/दानशीलता
- **विज्ञान** – विशेष-ज्ञान/प्रज्ञा
- **सत्त्व** – साहस/आन्तरिक-बल
- **आढ्यम्** – सम्पन्न/परिपूर्ण
- **महापक्षम्** – बड़ा पक्ष-समूह (शक्तिशाली गुट/सहयोगी-वर्ग)
- **प्रियंवदम्** – मधुर-वचन बोलने वाला
- **आयतिक्षमम्** – आयति (भविष्य) को देखने / सहन करने में समर्थ (दीर्घदर्शी)
- **अद्वैध्यम्** – द्वैध-रहित / एकनिष्ठ
- **मित्रम्** – मित्र/सहयोगी
- **कुर्वीत** – करे / बनाए
- **सत्कुलम्** – सत्कुल (उत्तम वंश/कुल में उत्पन्न)

भावार्थ
राजा अपना मित्र (सहयोगी-राज्य या राजनयिक-पक्ष) ऐसा चुने जो—(१) त्याग-सम्पन्न—उदार, संकट-काल में धन एवं

सेना देने को तत्पर; (२) विज्ञान-सम्पन्न—नीति-शास्त्र, अर्थशास्त्र एवं युद्ध-विद्या का गहरा ज्ञान रखने वाला; (३) सत्त्व-सम्पन्न—आन्तरिक साहस एवं नैतिक-दृढ़ता वाला; (४) महापक्ष—बड़े सामन्त/सहायक-समूह वाला; (५) प्रियंवद—बोलने में मीठा एवं मन-मोहक; (६) आयतिक्षम—दूरदर्शी, भविष्य के परिणामों को देखने में समर्थ; (७) अद्वैध्य—नीति एवं मैत्री में स्थिर; (८) सत्कुल—प्रतिष्ठित एवं विश्वसनीय वंश-परम्परा वाला। इन आठ गुणों से युक्त मित्र ही राज्य की सुरक्षा एवं अभ्युदय में सहायक होता है।

दार्शनिक विवेचन

मित्र-चयन का यह सिद्धान्त 'संविदा-शास्त्र' (Treaty-Philosophy) का आधार है। 'त्याग' एवं 'सत्त्व'—यह 'मैत्री का नैतिक-पक्ष' है; यह अरस्तू की 'नैतिक-मित्रता' (Moral Friendship) से सम्बन्ध रखता है। 'विज्ञान' एवं 'आयतिक्षम'—'बौद्धिक-पक्ष' है, जो मित्र को केवल भावुक न रखकर तर्क-प्रिय एवं योजनाकार बनाता है। 'महापक्ष' एवं 'सत्कुल'—'संरचनात्मक-पक्ष' (Structural Power) है; मैकियावेली ने भी कहा है कि छोटे-अस्थिर राज्यों की मित्रता निरर्थक होती है। 'अद्वैध्य'—'विश्वास-दर्शन' (Philosophy of Trust) है; बिना इसके कोई संधि क्षणभंगुर होती है। 'प्रियंवद'—'संप्रेषण-दर्शन' (Communication Ethics) है; मधुर-वाणी कूटनीति का प्राण है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में—त्याग/सत्त्व = विकास-सहायता (Aid) एवं रक्षा-सहयोग (भारत को रूस/अमेरिका से सहायता); विज्ञान/आयतिक्षम = जियो-पॉलिटिकल विजन (भारत की 'एक्ट-ईस्ट' नीति, चीन की 'बेल्ट-एण्ड-रोड'); महापक्ष = QUAD, NATO; प्रियंवद = राजनयिक-वार्ता (Diplomatic Courtesy) एवं सॉफ्ट-पॉवर; सत्कुल/अद्वैध्य = लोकतान्त्रिक-मूल्य एवं विश्वसनीय परम्परा (भारत-अमेरिका या भारत-रूस)। वर्तमान में ब्रिक्स, SCO आदि मित्र-गुटों में ये मानदण्ड अप्रत्यक्ष रूप से कार्य करते हैं।

श्लोक ६८ (कठिन संकटों में साथ देने वाला मित्र)

श्लोक

समुत्पन्नेषु कृच्छ्रेषु दारुणेष्व् अप्य् असंशयम् । पितृपैतामहं नित्यम् अद्वैध्यं हृदयानुगम् । महल्लघुसमुत्थानं मित्रं कार्यार्थम् इष्यते ॥६८॥

IAST

samutpanneṣu kṛcchreṣu dāruṇeṣv apy asaṃśayam | pitṛpaitāmahaṃ nityam advaidhyaṃ hṛdayānugam | mahallaghusamutthānaṃ mitraṃ kāryārtham iṣyate ||68||

शब्दार्थ

- **समुत्पन्नेषु** – उत्पन्न होने पर / आ पड़ने पर
- **कृच्छ्रेषु** – कष्ट/संकटों में
- **दारुणेषु** – भयानक/गम्भीर (विपत्तियों) में
- **असंशयम्** – निस्संदेह / बिना किसी हिचकिचाहट के
- **पितृपैतामहम्** – पैतृक (परम्परा-गत)
- **नित्यम्** – सदा / निरन्तर
- **अद्वैध्यम्** – एकनिष्ठ / दो-चित्त-रहित
- **हृदयानुगम्** – हृदय को सहानुभूति देने वाला / आत्मीय
- **महत्** – बड़े (कार्य)
- **लघु** – छोटे (कार्य)

- **समुत्थानम्** – उत्थान/सम्पादन करने में समर्थ
- **मित्रम्** – मित्र
- **कार्यार्थम्** – कार्य-सिद्धि के लिए
- **इष्यते** – वांछित/श्रेष्ठ माना जाता है

भावार्थ
कठिन, भयानक एवं आपत्कालीन परिस्थितियाँ उत्पन्न होने पर—युद्ध, दुर्भिक्ष, शत्रु-घात, वंश-संकट—जो मित्र बिना किसी संदेह/हिचकिचाहट (असंशयम्) के साथ खड़ा हो; जो पैतृक-परम्परा (पितृपैतामह) से राजा के वंश के साथ सदा से जुड़ा हो; जो नित्य (स्थायी) एवं अद्वैध्य (एकनिष्ठ) हो; जो हृदयानुग (हार्दिक-स्नेही) हो; तथा जो बड़े-बड़े सामरिक अभियानों से लेकर छोटे-छोटे लाज-शर्म के कामों तक—दोनों प्रकार के कार्यों को समुत्थापित (सम्पादित) करने में समर्थ हो—ऐसा मित्र ही कार्य-सिद्धि (राज्य-हित) के लिए वांछनीय है। सच्चा मित्र संकट-कसौटी पर खरा उतरने वाला, परम्परागत, स्थायी, अन्तरंग एवं बहु-आयामी-सहायक होता है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'आपत्कालीन-नैतिकता' (Crisis Ethics) एवं 'सहृदयता-दर्शन' (Philosophy of Empathy) को मित्रता में लागू करता है। 'असंशयम्'—वेदान्त में 'श्रद्धा' एवं 'निष्ठा' का ही दूसरा नाम है। 'पितृपैतामहम्'—'ऐतिहासिक-दायित्व' (Historical Obligation) है; हेगेल के अनुसार 'व्यक्ति अपने इतिहास का गुलाम नहीं, अभिन्न अंग है'। 'हृदयानुगम्'—'भावनात्मक-बुद्धि' (Emotional Intelligence) है; अरस्तू ने मित्रता को 'एक आत्मा जो दो शरीरों में वास करती है' कहा है। 'महल्लघुसमुत्थानम्'—'बहु-उपयोगिता' (Versatility) का दार्शनिक गुण है; यह स्टोइक दर्शन के 'अनुकूलन-सिद्धान्त' से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति में 'परम-मित्र' (All-Weather Friend) की अवधारणा इसी पर आधारित है—भारत-रूस सम्बन्ध 'पितृपैतामह' (सोवियत-काल से) एवं 'असंशय' (यूक्रेन युद्ध में भारत पर दबाव के बावजूद रूसी सहयोग) का उदाहरण हैं। 'समुत्पन्न-कृच्छ्रेषु' = कोविड-महामारी में वैक्सीन-सहायता या १९७१ युद्ध में सोवियत-संघ की वीटो-शक्ति। 'महल्लघुसमुत्थान' = रणनीतिक-आणविक-सहयोग से लेकर वोट-समर्थन तक—जैसे QUAD। आज सिंगापुर, जापान, ऑस्ट्रेलिया के साथ भारत की मैत्री इसी 'कृच्छ्र-सहिष्णु' एवं 'बहु-स्तरीय' मित्रता का उदाहरण है।

श्लोक ६९ (मित्र-संग्रह की त्रिविध विधि)

श्लोक
दूराद् एवाभिगमनं स्पष्टार्था हृदयानुगा । वाक्सत्कृत्य प्रदानं च त्रिविधो मित्रसंग्रहः ॥६९॥

IAST
dūrād evābhigamanaṃ spaṣṭārthā hṛdayānugā | vāksatkṛtya pradānaṃ ca trividho mitrasaṃgrahaḥ ||69||

शब्दार्थ
- **दूरात्** – दूर से
- **एव** – ही
- **अभिगमनम्** – उपगमन/जाना/मिलना
- **स्पष्टार्था** – स्पष्ट अर्थ/उद्देश्य वाली

• **हृदयानुगा** – हृदय को भाने वाली / मनोहर
• **वाक्** – वाणी/वचन
• **सत्कृत्य** – सत्कार/सम्मान करके
• **प्रदानम्** – दान/उपहार-प्रदान
• **च** – और
• **त्रिविधः** – तीन प्रकार का
• **मित्रसंग्रहः** – मित्रों को प्राप्त करना/आकर्षित करना

भावार्थ
राजा को मित्र-राष्ट्रों अथवा सहयोगियों को तीन मुख्य उपायों द्वारा अपनी ओर आकर्षित (संग्रह) करना चाहिए—(१) 'दूरादेवाभिगमनम्'—स्वयं उनके पास दूत-मण्डल भेजना या व्यक्तिगत रूप से जाना; सक्रिय एवं आदर-पूर्ण पहल करना, प्रतीक्षा में न बैठना। (२) 'स्पष्टार्था हृदयानुगा वाक्'—मधुर, सरल एवं हृदय को छू लेने वाली, किन्तु अपने उद्देश्य एवं शर्तों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने वाली वाणी का प्रयोग करना; न तो कपटी-अर्थ वाली वार्ता, न ही आक्रामक-धमकी। (३) 'सत्कृत्य प्रदानम्'—उचित सम्मान, पूजा-अर्चना, बहुमूल्य-उपहार अथवा आर्थिक-सैन्य-सहायता प्रदान करना; दान/उपहार को 'सत्कार' (गरिमा) के साथ देना—जिससे मित्र को गौरवान्वित अनुभव हो। ये तीनों विधियाँ—प्रत्यक्ष-उपस्थिति, सुस्पष्ट-मधुर-संवाद, एवं सम्मान-सहित-दान—मित्र-संग्रह की समग्र-रणनीति है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'राजनय-दर्शन' (Diplomatic Philosophy) का संक्षिप्त-सूत्र है। 'अभिगमनम्'—'सक्रिय-कर्तृत्व' (Proactive Agency) का बोध कराता है; जैसे भगवान् कृष्ण ने स्वयं कौरव-सभा में जाकर दूत-कार्य किया। 'स्पष्टार्था वाक्'—'संप्रेषण-न्याय' (Communicative Rationality) है—हैबरमास (Habermas) का 'संवाद-नैतिकता' (Discourse Ethics) यहाँ दिखता है; अस्पष्ट-वाणी से अविश्वास उत्पन्न होता है। 'सत्कृत्य प्रदानम्'—गीता में 'दान' को 'सात्त्विक' तब कहा गया है जब वह 'देशे, काले, पात्रे'—स्थान, समय एवं पात्र के अनुसार एवं सम्मान-सहित दिया जाए। यह त्रिविध-उपाय अरस्तू के 'अलंकार-शास्त्र' (Rhetoric) के तीन आधार—'इथोस' (सम्मान), 'पैथोस' (भावना/हृदयानुगा), एवं 'लोगोस' (तर्क/स्पष्टार्था)—को पूर्णतः समाहित करते हैं।

आधुनिक संदर्भ

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति एवं कॉर्पोरेट-बिजनेस-डील में यह 'मित्र-संग्रह-त्रयी' अक्षरशः लागू होती है—दूरादेवाभिगमनम् = राजकीय-यात्राएँ (State Visits) एवं शिखर-सम्मेलन (Summits)—जैसे भारत-अमेरिका २+२ वार्ता, या जी-२० शिखर-सम्मेलन; स्पष्टार्था हृदयानुगा वाक् = राजनयिक-वार्तापत्र (Diplomatic Communiqué) एवं संयुक्त-वक्तव्य (Joint Statement)—जिसमें सहमति-बिन्दु स्पष्ट हों, किन्तु भाषा में सौहार्द प्रकट हो; सत्कृत्य प्रदानम् = विदेशी-सहायता (Foreign Aid), रक्षा-उपकरण-निर्यात (Defense Exports), अनुदान (Grants)—जैसे भारत ने कोविड-वैक्सीन (वैक्सीन-मैत्री) सम्मान-पूर्वक विश्व-भर में दी। आज 'सॉफ्ट-पॉवर' (बॉलीवुड, योग) भी इसी 'हृदयानुगा-वाक्' के विस्तार हैं।

श्लोक ७० (मित्र से त्रिविध फल—धर्म-अर्थ-काम)

श्लोक
धर्मकामार्थसंयोगो मित्रात् तु त्रिविधं फलम् । यस्माद् एतत् त्रयं नास्ति तत् सेवेत न पण्डितः ॥७०॥

IAST
dharmakāmārthasaṃyogo mitrāt tu trividhaṃ phalam | yasmād etat trayaṃ nāsti tat seveta na paṇḍitaḥ ||70||

शब्दार्थ
- **धर्म** – धार्मिक-पुण्य/नीति
- **काम** – इच्छा/अभिलाषा (सांसारिक सुख)
- **अर्थ** – धन/ऐश्वर्य/शक्ति
- **संयोगः** – संयोग/प्राप्ति
- **मित्रात्** – मित्र से
- **त्रिविधम्** – तीन प्रकार का
- **फलम्** – फल/लाभ
- **यस्मात्** – जिस (मित्र) से
- **एतत् त्रयम्** – ये तीनों (धर्म-काम-अर्थ)
- **नास्ति** – नहीं हैं
- **तत्** – उस (मित्र) को
- **सेवेत** – सेवा/सहारा/मित्रता करे
- **न** – नहीं
- **पण्डितः** – विद्वान/बुद्धिमान राजा

भावार्थ
एक उत्तम मित्र से राजा को त्रिविध (तीन प्रकार का) फल प्राप्त होता है—(१) धर्म—मित्र के सहयोग से धार्मिक-अनुष्ठान, पुण्य-कार्य, वेद-रक्षा, अतिथि-सत्कार पूरे होते हैं; (२) काम—इच्छाओं की पूर्ति, वैभव, विलास, कलाओं का विकास, मानसिक-तृप्ति; (३) अर्थ—मित्र राज्य से प्राप्त कर-राजस्व, व्यापारिक-सुविधाएँ, युद्ध-लूट, सहायता-अनुदान, आर्थिक-सम्पन्नता। यदि कोई मित्र इन तीनों में से किसी एक का भी लाभ नहीं देता, अथवा इन तीनों से विहीन है (मित्रता निरर्थक/हानिकारक है), तो विद्वान राजा को उसकी मैत्री नहीं करनी चाहिए—ऐसे सहयोगी को त्याग देना ही उचित है। यह व्यावहारिक-बुद्धि (Pragmatic Wisdom) है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'पुरुषार्थ-सिद्धान्त' (Theory of Trivarga) का राजनयिक-अनुप्रयोग है। धर्म, अर्थ एवं काम—मानव-जीवन के तीन आधार-स्तम्भ हैं; मित्रता इन तीनों के साधन-रूप में आती है। यदि मित्रता इन्हें सिद्ध नहीं करती, तो वह जीवन-दर्शन में 'अर्थशून्य' (Nihilistic) है। 'यस्मादेतत्त्रयं नास्ति'—यह 'उपयोगितावाद' (Utilitarianism) का चरम रूप है, किन्तु भारतीय दर्शन में 'उपयोगिता' को 'त्रिवर्ग-संयोग' से मापा जाता है, न कि केवल भौतिक-लाभ से। यह मैकियावेली के 'यथार्थवाद' (Realism) से गहरा सम्बन्ध रखता है—राज्य को 'स्वार्थ-रहित-मित्रता' (Altruistic Friendship) में अंध नहीं होना चाहिए। कामन्दक यहाँ 'राज-धर्म' का 'नैतिक-आदर्श' न छोड़कर 'व्यावहारिक-तर्क' (Practical Reason) को महत्व देते हैं।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक वैश्विक-राजनीति एवं व्यवसाय में इसे 'निवेश-प्रतिफल' (Return on Investment) एवं 'रणनीतिक-लाभ' (Strategic Gains) कहा जाता है। धर्म-फल = अन्तर्राष्ट्रीय-कानून, मानवाधिकार, पर्यावरण-संरक्षण (वसुधैव कुटुम्बकम्); अर्थ-फल = द्विपक्षीय-व्यापार (Bilateral Trade), FDI (भारत-यूएई CEPA, भारत-आसियान FTA); काम-फल = सांस्कृतिक-आदान-प्रदान, पर्यटन, योग-दिवस का वैश्वीकरण। आधुनिक राजनय में 'यूजलेस-एलायंस' (कमज़ोर आर्थिक-

अस्थिर देशों की मित्रता) से अलग होना 'पण्डित' राज्यों की नीति है—जैसे चीन ने कुछ अफ्रीकी-देशों से निवेश घटाया। यह श्लोक आज 'डिप्लोमेटिक कॉस्ट-बेनिफिट एनालिसिस' का प्राचीनतम एवं श्रेष्ठ-सूत्र है।

श्लोक ७१ (सज्जनों की मित्रता का नदी-रूपक)

श्लोक
आदौ तन्व्यो बृहन्मध्या विस्तारिण्यः पदे पदे । यायिन्यो न निवर्तिन्यः सतां मैत्र्यः सरित्समाः ॥७१॥

IAST
ādau tanvyo bṛhanmadhyā vistāriṇyaḥ pade pade | yāyinyo na nivartinyaḥ satāṃ maitryaḥ saritsamāḥ ||71||

शब्दार्थ
- **आदौ** – आरम्भ में
- **तन्व्यः** – सूक्ष्म/पतली
- **बृहन्मध्या** – मध्य में विशाल
- **विस्तारिण्यः** – फैलने वाली
- **पदे पदे** – प्रत्येक कदम पर
- **यायिन्यः** – आगे बढ़ने वाली
- **न निवर्तिन्यः** – लौटकर पीछे न हटने वाली
- **सताम्** – सज्जनों की
- **मैत्र्यः** – मित्रताएँ
- **सरित्समाः** – नदियों के समान

भावार्थ
सज्जन पुरुषों की मित्रता नदी के जल-प्रवाह के सदृश होती है। जिस प्रकार कोई नदी अपने उद्गम-स्थल पर अत्यन्त संकीर्ण (पतली) होती है, किन्तु आगे बढ़ने पर मध्य-मार्ग में विशाल एवं गम्भीर हो जाती है, और अन्त में सागर में जा मिलने पर अत्यन्त विस्तृत एवं अथाह रूप धारण कर लेती है—ठीक उसी प्रकार सज्जनों की मैत्री आरम्भ में संकोचयुक्त एवं क्षीण प्रतीत होती है, परन्तु समय, संगति और विश्वास के विकास के साथ वह अत्यन्त गहन एवं व्यापक बन जाती है। यह मैत्री कभी उल्टी दिशा में नहीं बहती (अर्थात् कभी विश्वासघात नहीं करती), वह सदा अग्रगामिणी, वर्धमान एवं फलवती होती है। 'न निवर्तिन्यः'—सच्ची मित्रता में प्रतिकूलता आने पर भी पीछे हटने का भाव नहीं होता।

दार्शनिक विवेचन

यह उपमा भारतीय दर्शन के **नैतिक विकास-सिद्धान्त (क्षितिज-विस्तार)** को प्रतिबिम्बित करती है। सांख्य दर्शन में 'सत्त्व-गुण' की वृद्धि को प्रकाश एवं विस्तार का कारण माना गया है; वैसे ही सत्पुरुषों की मैत्री *सत्त्व-प्रधान* होती है, जो धीरे-धीरे आत्म-विकास एवं परोपकार की ओर अग्रसर होती है। अरस्तू की *निकोमैखियन एथिक्स* में भी सच्ची मित्रता (*philia*) को 'धीरे-धीरे विकसित होने वाली' एवं 'गुणों पर आधारित' बताया गया है। यह नदी का रूपक हमें **अनित्यता (क्षणभंगुरता)** का नहीं, वरन् **सातत्य एवं गहनता** का बोध कराता है। मैत्री एक 'प्रक्रिया' है, स्थिर वस्तु नहीं—जैसे नदी स्थिर नहीं रहती, वैसे ही मैत्री को निरन्तर पोषण, स्नेह एवं त्याग की आवश्यकता होती है। यह भारतीय नीतिशास्त्र की **'क्रम-विकास-दृष्टि'** (gradual progression) को उजागर करता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक मनोविज्ञान (सामाजिक मनोविज्ञान) में 'सामाजिक प्रवेश सिद्धान्त' (Social Penetration Theory — Altman & Taylor) कहता है कि सम्बन्ध धीरे-धीरे सतही से गहन होते हैं, ठीक नदी के विस्तार की भाँति। इसी प्रकार, आधुनिक संगठनों में 'विश्वास-निर्माण' (Trust-building) एक क्रमिक प्रक्रिया है; अचानक गहन विश्वास करना व्यावसायिक एवं व्यक्तिगत जीवन में जोखिमपूर्ण है। अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में भी दीर्घकालिक सामरिक साझेदारियाँ (Strategic partnerships) समय के साथ परीक्षित एवं गहन होती हैं—जैसे भारत-रूस या भारत-अमेरिका सम्बन्ध। 'न निवर्तिन्यः' का सिद्धान्त आज के Corporate Governance में 'लॉयल्टी' (निष्ठा) और 'Commitment' के रूप में देखा जाता है। जो सम्बन्ध विपत्ति में टिके रहें, वही सच्ची साझेदारी है—यही आधुनिक 'क्राइसिस मैनेजमेंट' का मूल मन्त्र है।

श्लोक ७२ (मित्र के चार प्रकार)

श्लोक
औरसं मैत्रसम्बद्धं तथा वंशक्रमागतम् । रक्षितं व्यसनेभ्यश्च मित्रं ज्ञेयं चतुर्विधम् ॥७२॥

IAST
aurasam maitrasambaddhaṃ tathā vaṃśakramāgatam | rakṣitaṃ vyasanebhyaś ca mitraṃ jñeyaṃ caturvidham ||72||

शब्दार्थ
• **औरसम्** – औरस (स्वाभाविक/रक्त-सम्बन्धी या स्वयं उत्पन्न)
• **मैत्रसम्बद्धम्** – मैत्री के बन्धन से युक्त
• **तथा** – तथा
• **वंशक्रमागतम्** – वंश-परम्परा से प्राप्त
• **रक्षितम्** – रक्षा किया हुआ
• **व्यसनेभ्यः** – विपत्तियों/आपदाओं से
• **च** – और
• **मित्रम्** – मित्र
• **ज्ञेयम्** – जानना चाहिये
• **चतुर्विधम्** – चार प्रकार का

भावार्थ
कामन्दक ने मित्र को चार प्रकारों में वर्गीकृत किया है—(१) **औरस** – जो नैसर्गिक हो, जैसे स्वजन या कुटुम्बी; (२) **मैत्रसम्बद्ध** – जो आपसी प्रेम, स्नेह व समान रुचि के कारण बना हो; (३) **वंशक्रमागत** – जो पितरों से चला आ रहा हो (पैतृक मित्र); तथा (४) **रक्षित** – जिसे विपत्तियों एवं संकटों से बचाकर अपनाया गया हो, अर्थात् जो आपद्-काल में सहारा देने वाला सिद्ध हुआ हो। ये चारों प्रकार शास्त्रसम्मत हैं और राजा को इन्हें पहचानना चाहिए। 'रक्षित' मित्र विशेष महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वह अग्नि-परीक्षा में खरा उतरा होता है। वंशक्रमागत मित्रता भारतीय राजनीति की एक विशेषता है, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी विश्वास-सूत्र को बनाए रखती है।

दार्शनिक विवेचन

यह वर्गीकरण **'ऋण-त्रय' (देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण)** की अवधारणा से मेल खाता है—वंशक्रमागत मित्र पितृऋण का ही एक रूप है। 'औरस' मित्रता में *स्वभाव-सिद्ध* स्नेह है, जबकि 'मैत्रसम्बद्ध' में *कर्म-सिद्ध* एवं *स्वतन्त्र-संकल्प* का प्राधान्य है। यह चातुर्विध्य (चार-प्रकारत्व) दार्शनिक दृष्टि से **'भेद-अभेद-वाद'** को प्रतिबिम्बित करता है—सभी मित्र भिन्न

प्रकार के हैं, किन्तु सभी का लक्ष्य 'सहायता' एवं 'परस्पर-हित' ही है। यह स्पष्ट करता है कि मित्रता का मूल्यांकन उसकी उत्पत्ति (जन्मजात या कृतिम) से न करके उसके *संकट-सहिष्णुता* एवं *निरन्तरता* से करना चाहिए।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में भी चार प्रकार की मित्रता देखी जा सकती है—(१) **औरस** → 'विशेष सम्बन्ध' (Special Relationship — जैसे UK-USA); (२) **मैत्रसम्बद्ध** → 'संधि-बद्ध सहयोगी' (Treaty Allies — जैसे NATO); (३) **वंशक्रमागत** → 'पैतृक मित्र' (Traditional Friends — जैसे भारत-नेपाल); (४) **रक्षित** → 'संकट-काल में साथ देने वाले' (Crisis-tested Allies — जैसे भारत-रूस)। कॉर्पोरेट जगत में भी 'नेटवर्किंग' को इसी चतुर्विध आधार पर वर्गीकृत किया जाता है: पारिवारिक व्यवसाय में औरस, व्यापारिक साझेदारी में मैत्रसम्बद्ध, पुराने ग्राहकों का वंशक्रमागत सम्बन्ध, तथा विपत्ति (जैसे कोविड-काल) में सहायक कम्पनियाँ रक्षित मित्र की श्रेणी में आती हैं। यह सिद्धान्त हमें सिखाता है कि 'सभी मित्र समान नहीं होते'; उनका मूल्यांकन उनकी *विश्वसनीयता* एवं *समय-परीक्षितता* के आधार पर करना चाहिए।

श्लोक ७३ (सच्चे मित्र के आठ गुण)

श्लोक
शुचिता त्यागिता शौर्यं समानसुखदुःखता । अनुरागश्च दाक्ष्यं च सत्यता च सुहृद्गुणाः ॥७३॥

IAST
śucitā tyāgitā śauryaṃ samānasukhaduḥkhatā | anurāgaś ca dākṣyaṃ ca satyatā ca suhṛdguṇāḥ ||73||

शब्दार्थ
• **शुचिता** – पवित्रता (आचरण-शुद्धि)
• **त्यागिता** – त्याग/दानशीलता
• **शौर्यम्** – वीरता/साहस
• **समानसुखदुःखता** – सुख-दुःख में समभाव
• **अनुरागः** – गहरा स्नेह/अनुरक्ति
• **च** – और
• **दाक्ष्यम्** – कुशलता/निपुणता
• **सत्यता** – सत्यनिष्ठा
• **च** – तथा
• **सुहृद्गुणाः** – सुहृद् (सच्चे मित्र) के गुण हैं

भावार्थ
एक सच्चे मित्र (सुहृद्) में आठ प्रमुख गुण होने चाहिए—(१) **शुचिता**—नैतिक पवित्रता एवं पारदर्शिता; (२) **त्यागिता**—स्वार्थ का त्याग करके देने की भावना; (३) **शौर्य**—कठिनाई में डटकर सामना करने का साहस; (४) **समानसुखदुःखता**—हर्ष और विषाद में मित्र के साथ तादात्म्य रखना (सुख-दुःख का साझा); (५) **अनुराग**—प्रगाढ़ एवं निस्वार्थ स्नेह; (६) **दाक्ष्य**—व्यवहार-कौशल एवं कार्य-सम्पादन की दक्षता; तथा (७-८) **सत्यता**—सदा सत्य का पालन। ये गुण मित्रता की आधारशिला हैं। बिना इन गुणों के कोई भी सम्बन्ध स्वार्थ-प्रधान हो जाता है, जो वास्तविक मित्रता नहीं, अपितु स्वार्थ-साधन का मात्र साधन है। 'समानसुखदुःखता' अत्यन्त महत्वपूर्ण है—यह *सहानुभूति* (Empathy) एवं *आत्मीयता* का आधार है।

दार्शनिक विवेचन

ये गुण **'सात्विक-गुण'** (Sāttvika Guṇas) के अन्तर्गत आते हैं, जो भगवद्गीता एवं योगदर्शन में 'दैवी सम्पद्' कहे गए हैं। 'शुचिता' आन्तरिक शुद्धि (शौच-संतोष-तप-स्वाध्याय-ईश्वरप्रणिधान) का प्रतीक है। 'समानसुखदुःखता' **मैत्री-भावना (सुख-दुःखे समे कृत्वा)**—यह गीता का प्रसिद्ध सूत्र है, जो इन्द्रिय-विषयक द्वन्द्वों से उपरत होकर समभाव स्थापित करने की शिक्षा देता है। अरस्तू का 'स्वर्ण-मध्य' (Golden Mean) भी इन गुणों को समर्थन देता है। नीतिशास्त्र में 'सत्यता' को *परम-धर्म* माना गया है; यहाँ कामन्दक ने व्यावहारिक-नीति को नैतिकता से अलग नहीं किया है। यह स्पष्ट करता है कि *केवल उपयोगिता* (utility) मित्रता का आधार नहीं, बल्कि *नैतिक-आधार* (virtue ethics) भी उतना ही आवश्यक है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक व्यावसायिक नेतृत्व एवं प्रबन्धन में ये आठ गुण 'प्रभावी नेतृत्व (Leadership) एवं टीम-निर्माण' के आधार माने जाते हैं। 'शुचिता' = पारदर्शिता (Transparency) और ईमानदारी (Integrity); 'त्यागिता' = परोपकारी नेतृत्व (Servant Leadership); 'शौर्य' = जोखिम उठाने की क्षमता (Risk-taking ability); 'समानसुखदुःखता' = भावनात्मक बुद्धि (Emotional Intelligence — EQ) का उच्च स्तर; 'अनुराग' = संगठनात्मक प्रतिबद्धता (Organizational Commitment); 'दाक्ष्य' = कार्य-निष्पादन कुशलता (Performance Competence); 'सत्यता' = विश्वसनीयता (Trustworthiness)। आधुनिक HR (Human Resources) में '360-डिग्री फीडबैक' इन्हीं गुणों को मापता है। अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति में भी 'सत्यता' एवं 'शुचिता' के अभाव में कोई देश विश्वसनीय साझेदार नहीं बन सकता।

श्लोक ७४ (मित्रता का सार—परार्थ-तत्परता एवं आत्म-रक्षा)

श्लोक
तदर्थेहानुरागश्च सङ्क्षिप्तं मित्रलक्षणम् । यस्मिन्नैतन्न तन्मित्रं तत्रात्मानं न निक्षिपेत् ॥७४॥

IAST
tadarthehānurāgaś ca saṅkṣiptaṃ mitralakṣaṇam | yasmin naitat na tan mitraṃ tatrātmānaṃ na nikṣipet ||74||

शब्दार्थ
- **तदर्थेहानुरागः** – उस (मित्र) के अर्थ (हित) के लिए प्रयत्न एवं अनुराग (तत् + अर्थ + ईहा + अनुरागः)
- **च** – और
- **सङ्क्षिप्तम्** – संक्षिप्त
- **मित्रलक्षणम्** – मित्र का लक्षण
- **यस्मिन्** – जिस (व्यक्ति) में
- **न** – नहीं
- **एतत्** – यह (लक्षण)
- **तत्** – वह
- **मित्रम्** – मित्र नहीं
- **तत्र** – उसमें
- **आत्मानम्** – अपने आप को (अपना विश्वास/हृदय)
- **न निक्षिपेत्** – नहीं डालना चाहिए (न्यस्त नहीं करना चाहिए)

भावार्थ
पूर्वोक्त गुणों के अतिरिक्त, मित्रता की पहचान का सबसे सार-संक्षिप्त लक्षण यह है कि **मित्र के हित के लिए निस्वार्थ प्रयत्न एवं अनुराग** होना चाहिए—अर्थात् अपने लाभ की चिन्ता किये बिना केवल मित्र के कल्याण के लिए चेष्टा करना। कामन्दक चेतावनी देते हैं कि जिस व्यक्ति में यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण लक्षण (परार्थ-प्रयत्न एवं अनुराग) विद्यमान न हो, वह वास्तव में मित्र नहीं है; और ऐसे व्यक्ति पर कभी भी अपना पूर्ण विश्वास, हृदय अथवा अपने जीवन-रहस्य नहीं सौंपने चाहिए। मित्रता का सार *'परार्थ-तत्परता'* है, न कि केवल पारस्परिक लाभ-विनिमय। जहाँ यह भाव नहीं, वहाँ सम्बन्ध स्वार्थ का सौदा (transactional relationship) मात्र है, जो आपदा में टूट जाता है।

दार्शनिक विवेचन

यह श्लोक **परोपकार-वाद (Altruism)** को मित्रता का *सिने-क्वा-नॉन* (अनिवार्य आधार) बताता है। भारतीय दर्शन में 'परहित' को 'धर्म' का मूल माना गया है—'परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः, परोपकाराय वहन्ति नद्यः'। यहाँ 'आत्मानं न निक्षिपेत्' का आशय केवल भौतिक वस्तुओं का नहीं, अपितु *आत्म-विश्वास, गुप्त मन्त्रणा, एवं आत्म-सुरक्षा* का है। यह मैकियावेली के *'शासक को किसी पर पूर्ण विश्वास नहीं करना चाहिए'* के सिद्धान्त से मेल खाता है, किन्तु भारतीय नीति इसे नैतिक-आधार पर प्रतिष्ठापित करती है—परीक्षा के बिना विश्वास करना मूर्खता है, जबकि गुणवान पर विश्वास करना उचित है। यह **'आत्म-रक्षा' (प्राज्ञता) एवं 'पर-स्नेह' (दया)** का समन्वय है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक परामर्श (मनोविज्ञान) में 'सीमाएँ निर्धारित करना' (Boundary Setting) इसी श्लोक का प्रतिबिम्ब है। 'ट्रस्ट बट वेरिफाई' (Trust but Verify) रीगन-युग की प्रसिद्धि मुहावरा इसी तत्व पर आधारित है। आज के डिजिटल युग में, साइबर-सुरक्षा एवं वित्तीय लेन-देन में 'अनजान व्यक्ति' को अपनी व्यक्तिगत जानकारी (आत्मानम्) देना बहुत खतरनाक है। व्यावसायिक साझेदारी (Joint Ventures) में 'Due Diligence' (परीक्षण) अनिवार्य है—सिर्फ़ सौहार्द के आधार पर कभी पूँजी या बौद्धिक सम्पदा नहीं सौंपनी चाहिए। कामन्दक का यह सिद्धान्त 'इमोशनल इंटेलिजेंस' को 'रिस्क मैनेजमेंट' से जोड़ता है। विश्व राजनीति में, जो राष्ट्र बिना परीक्षण के गठबन्धन बना लेते हैं, वे भविष्य में विश्वासघात का शिकार होते हैं (जैसे विश्व-युद्धों में गठबन्धनों का उलट-फेर)।

श्लोक ७५ (निष्कर्ष—त्रिवर्ग की शाश्वत सिद्धि)

श्लोक
इति स्म राज्यं सकलं समीरितं परा प्रतिष्ठास्य धनं ससाधनम् । गृहीतम् एतन् निपुणेन मन्त्रिणा त्रिवर्गनिष्पत्तिम् उपैति शाश्वतीम् ॥७५॥

IAST
iti sma rājyaṃ sakalaṃ samīritaṃ parā pratiṣṭhāsya dhanaṃ sasādhanam | gṛhītam etan nipuṇena mantriṇā trivarganiṣpattim upaiti śāśvatīm ||75||

शब्दार्थ
• **इति** – इस प्रकार
• **स्म** – निश्चय ही
• **राज्यम्** – राज्य
• **सकलम्** – सम्पूर्ण
• **समीरितम्** – कहा गया/वर्णन किया गया
• **परा** – उत्कृष्ट

- **प्रतिष्ठा** – स्थिति/प्रतिष्ठा
- **अस्य** – इस (शास्त्र) का
- **धनम्** – (यहाँ) साधन-सम्पत्ति
- **ससाधनम्** – साधनों सहित
- **गृहीतम्** – ग्रहण किया हुआ
- **एतत्** – यह
- **निपुणेन** – कुशल/चतुर
- **मन्त्रिणा** – मन्त्री द्वारा
- **त्रिवर्ग** – धर्म, अर्थ, काम
- **निष्पत्तिम्** – सिद्धि/प्राप्ति
- **उपैति** – प्राप्त करता है
- **शाश्वतीम्** – शाश्वत/स्थायी

भावार्थ

कामन्दक कहते हैं—इस प्रकार मैंने सम्पूर्ण राज्य-तन्त्र (सप्ताङ्ग सहित) का वर्णन कर दिया है। जब इस शास्त्र-ज्ञान को कोई **निपुण एवं कुशल मन्त्री** सम्यक् रूप से आत्मसात् कर लेता है और उसे व्यवहार में उतारता है, तो वह उत्कृष्ट प्रतिष्ठा एवं सम्पूर्ण साधन-सम्पत्ति को प्राप्त कर लेता है। इस ज्ञान-सम्पदा के द्वारा वह मन्त्री एवं राजा **त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम)** की शाश्वत सिद्धि को प्राप्त हो जाते हैं—अर्थात् उनका शासन नैतिक (धर्म), समृद्ध (अर्थ) एवं सुख-प्रद (काम) होता है, और यह सफलता क्षणिक न होकर स्थायी (शाश्वती) होती है। 'परा प्रतिष्ठा' का अर्थ केवल प्रसिद्धि नहीं, वरन् *धार्मिक-आधारित कीर्ति* है।

दार्शनिक विवेचन

'त्रिवर्ग' की अवधारणा भारतीय दर्शन की विशिष्ट देन है। यह पाश्चात्य दर्शन के केवल 'उपयोगितावाद' (Utilitarianism) या 'सुखवाद' (Hedonism) से कहीं आगे है, क्योंकि यह **धर्म (विधि-निष्ठा)** को अर्थ व काम पर प्राथमिकता देता है। 'शाश्वती निष्पत्ति'—यह फल कर्म-बन्धन से मुक्त करता है (निष्काम कर्म का फल)। व्यावहारिक-नीति के इस ग्रन्थ का उद्देश्य केवल सांसारिक सफलता नहीं, अपितु **'ऐहिक-पारमार्थिक' समन्वय** है। यह सांख्य-योग के *'स्वधर्म-पालन'* से मेल खाता है। मन्त्री को नीतिशास्त्र का 'उपदेष्टा' माना गया है; यहाँ उसकी भूमिका प्लेटो के 'दार्शनिक-राजा' (Philosopher King) की तरह नहीं, वरन् 'दार्शनिक-मन्त्री' (व्यवहार-विज्ञ) की है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक शासन-व्यवस्था में 'नीति-आयोग' (Policy Think Tanks) और 'कैबिनेट सचिव' (Cabinet Secretary) इस 'निपुण मन्त्री' की भूमिका निभाते हैं। यह श्लोक 'गवर्नेंस के सतत विकास' (Sustainable Governance) की बात करता है—जो आज के SDGs (Sustainable Development Goals) से मेल खाता है। 'त्रिवर्ग' का आधुनिक रूप है—**धर्म = नैतिक शासन (Ethical Governance), अर्थ = आर्थिक विकास (GDP/Capita), काम = सामाजिक कल्याण एवं जन-सुख (Social Welfare/HDI)**। जो देश इन तीनों में सन्तुलन रखता है, वही 'शाश्वत' समृद्धि को प्राप्त करता है। कोविड-महामारी के बाद, जिन देशों ने धर्म (स्वास्थ्य-नैतिकता), अर्थ (आर्थिक पैकेज) और काम (मानसिक स्वास्थ्य) का समन्वय किया, वे शीघ्र पटरी पर लौटे।

श्लोक ७६ (आत्मा-शरीर उपमा—राजा और राज्य का अभिन्न सम्बन्ध)

श्लोक

यथान्तरात्मा प्रकृतीरधिष्ठितश्चराचरं विश्वमिदं समश्नुते । तथा नरेन्द्रः प्रकृतीरधिष्ठितश् चराचरं विश्वमिदं समश्नुते ॥७६॥

IAST

yathāntarātmā prakṛtīr adhiṣṭhitaś carācaraṃ viśvam idaṃ samaśnute | tathā narendraḥ prakṛtīr adhiṣṭhitaś carācaraṃ viśvam idaṃ samaśnute ||76||

शब्दार्थ

- **यथा** – जिस प्रकार
- **अन्तरात्मा** – आन्तरिक आत्मा (जीवात्मा)
- **प्रकृतीः** – प्रकृति-तत्वों/शरीर-अवयवों (या राज्य-अंगों) को
- **अधिष्ठितः** – अधिष्ठान करके (शरीर में स्थित होकर)
- **चराचरम्** – चर (जंगम) एवं अचर (स्थावर)
- **विश्वम्** – समस्त विश्व (या स्थूल-शरीर)
- **समश्नुते** – सम्यक् रूप से भोगता/अनुभव करता है
- **तथा** – उसी प्रकार
- **नरेन्द्रः** – राजा
- **प्रकृतीः** – राज्य-प्रकृतियों (सप्ताङ्ग) को
- **अधिष्ठितः** – उन पर आधिपत्य करके
- **समश्नुते** – भोगता/शासन करता है

भावार्थ

कामन्दक अत्यन्त गहन दार्शनिक उपमा देते हैं—जैसे **आत्मा शरीर-रूपी प्रकृति** (इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, पञ्च-महाभूत) का अधिष्ठाता होकर सम्पूर्ण चराचर जगत (शरीर के भीतर व बाहर के समस्त पदार्थों) को ग्रहण करती है, भोगती है और उस पर अपना प्रभाव डालती है, वैसे ही **राजा** अपनी सातों प्रकृतियों (स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, बल, सुहृत) पर अधिष्ठित होकर उनके माध्यम से सम्पूर्ण राज्य-विश्व का उपभोग एवं संचालन करता है। राजा वह 'चेतन-तत्त्व' (आत्मा) है और ये प्रकृतियाँ उसके 'शरीर' हैं। यह सूत्र स्पष्ट करता है कि राजा और राज्य का सम्बन्ध *जीव-शरीर* के समान अभिन्न एवं व्यापक है।

दार्शनिक विवेचन

यह श्लोक **सांख्य-दर्शन के पुरुष-प्रकृति सिद्धान्त** का राजनीति पर अनुप्रयोग है। सांख्य में 'पुरुष' (चेतन) साक्षी-भाव से प्रकृति को देखता है, वैसे ही राजा (नरेन्द्र) राज्य-प्रकृतियों (सप्ताङ्ग) का केवल 'द्रष्टा' नहीं, बल्कि 'संयोजक' (समश्नुते) है। उपनिषदों का महावाक्य *'अहं ब्रह्मास्मि'* यहाँ राजा के लिए *'अहं राज्यमस्मि'* (मैं ही राज्य हूँ) के रूप में परिणत होता है। राजा की उपेक्षा शरीर-रूपी राज्य की मृत्यु है—यह **'अधिष्ठित'** (अधिष्ठान) शब्द *अधि+स्था* से बना है, जिसका अर्थ है 'सशक्त रूप से आधार-स्तम्भ होना'। यह प्लेटो के *'Republic'* के 'जस्टिस' सिद्धान्त से मेल खाता है, जहाँ राज्य व्यक्ति का विस्तार है। कामन्दक की यह उपमा अद्वैत वेदान्त (व्यष्टि-समष्टि) को राजनीति में प्रतिष्ठापित करती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राजनीति-शास्त्र का 'ऑर्गेनिक थ्योरी ऑफ़ स्टेट' (Organismic Theory—स्पेंसर, प्लेटो) इसी उपमा पर आधारित है। राष्ट्र को 'जीवित-निकाय' (Living Body) मानना आधुनिक भू-राजनीति एवं राष्ट्रवाद का आधार है। 'अधिष्ठित' की अवधारणा आज के 'स्ट्रॉन्ग एक्जीक्यूटिव' (सशक्त कार्यपालिका) को दर्शाती है—जैसे राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री

विभिन्न मन्त्रालयों (प्रकृतियाँ) का समन्वय करते हैं। कॉर्पोरेट जगत में CEO को 'कंपनी की आत्मा' (Soul of the Company) कहा जाता है, जो सभी विभागों (HR, Finance, Marketing) को संचालित करता है। यह श्लोक यह भी बताता है कि यदि राजा/नेता भ्रष्ट या अक्षम है तो समस्त राज्य-निकाय (शरीर) रुग्ण हो जाता है—यह सिद्धान्त 'नेतृत्व-दोष' (Leadership Deficit) के आधुनिक अध्ययनों का मूल है।

श्लोक ७७ (प्रजा-पालन से परम समृद्धि)

श्लोक
प्रकृतिभिरिति सम्यगन्वितो जनपदमादरवांस्तु पालयेत् । जनपदपरिपालनाच्चिरं व्रजति नृपः परमं श्रियः पदम् ॥७७॥

IAST
prakṛtibhir iti samyaganvito janapadam ādaravāṃs tu pālayet | janapadaparipālanāc ciram vrajati nṛpaḥ paramaṃ śriyaḥ padam ||77||

शब्दार्थ
- **प्रकृतिभिः** – राज्य-प्रकृतियों (सप्ताङ्ग) के साथ
- **इति** – इस प्रकार
- **सम्यक्** – सम्यक्/उचित रूप से
- **अन्वितः** – युक्त/संयुक्त
- **जनपदम्** – जनपद/प्रजा/राष्ट्र
- **आदरवान्** – आदर-भाव से युक्त
- **तु** – तथा
- **पालयेत्** – पालन/रक्षा करे
- **जनपदपरिपालनात्** – प्रजा के भली-भाँति पालन-पोषण एवं रक्षण से
- **चिरम्** – दीर्घकाल तक
- **व्रजति** – प्राप्त होता है
- **नृपः** – राजा
- **परमम्** – परम/उत्कृष्ट
- **श्रियः** – समृद्धि/लक्ष्मी का
- **पदम्** – पद/स्थान

भावार्थ
राजा को चाहिए कि वह सातों प्रकृतियों से सम्यक् रूप से युक्त होकर **आदर-भावपूर्वक अपनी प्रजा (जनपद) का पालन** करे। 'पालन' का अर्थ केवल रक्षा या दण्ड देना नहीं, वरन् पोषण, सुरक्षा, न्याय एवं विकास है। 'आदरवान्' शब्द विशेष महत्त्व रखता है—राजा को प्रजा के प्रति आदर, संवेदना एवं करुणा रखनी चाहिए, तानाशाही नहीं। इस प्रकार **प्रजा-पालन (जनपद-परिपालन)** के फलस्वरूप राजा दीर्घकाल तक **परम ऐश्वर्य एवं समृद्धि** (श्री-पद) को प्राप्त करता है। 'चिरम्'—यह सफलता क्षणिक राजनीतिक चाल-चलन से नहीं, वरन् स्थायी नीतियों एवं जन-हित से प्राप्त होती है। 'जन-कल्याण' ही राजा की सर्वोच्च सम्पदा है।

दार्शनिक विवेचन

यह श्लोक **'लोक-संग्रह' (जन-हित)** के भगवद्गीता-सिद्धान्त पर आधारित है (गीता ३.२०—'लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि')। राजा का कर्तव्य केवल भोग-लिप्सा नहीं, अपितु *लोक-यात्रा* को सुचारु रखना है। 'परिपालन' का नैतिक-

दार्शनिक अर्थ है—राजा प्रजा का 'पालक' (रक्षक) है, स्वामी नहीं। यह **'साम्राज्यवाद' (Imperialism)** का नहीं, **'कल्याणकारी राज्य' (Welfare State)** का सूत्र है। मीमांसा दर्शन में 'यज्ञ' के फल का सम्बन्ध 'लोक-हित' से जोड़ा गया है; यहाँ राजा का शासन ही एक महायज्ञ है, जिसका फल 'श्री' (समृद्धि) के रूप में मिलता है। यह आधुनिक समाजवादी विचारधारा से पूर्व का 'सामाजिक-न्याय' का प्राचीन रूप है, जो 'अहिंसा' एवं 'दया' पर आधारित है।

आधुनिक संदर्भ

आज का 'सुशासन' (Good Governance) इसी 'जनपद-परिपालन' का पर्याय है। संयुक्त राष्ट्र का 'मानव-विकास सूचकांक' (HDI) एवं 'सतत विकास लक्ष्य' (SDGs) इसी दर्शन पर टिके हैं। 'आदरवान् पालयेत्'—आज के 'सर्विस-डिलिवरी मॉडल' (सेवा-प्रदान प्रतिमान) को रेखांकित करती है; राजा/सरकार 'प्रभु' नहीं, 'सेवक' है। भारत का 'प्रधानमंत्री' शब्द ही 'प्रधान + मन्त्री' (मुख्य मन्त्रणा-दाता) है, जो सेवा-भाव को दर्शाता है। दीर्घकालिक आर्थिक विकास (चिरं श्री) केवल उन्हीं देशों को मिलता है जो शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढाँचे में निवेश करके 'मानव-पूँजी' का विकास करते हैं। 'जनपद' को नज़रअंदाज करने वाले शासन (जैसे फासीवादी तानाशाही) क्षणभंगुर होते हैं और अन्ततः अपना 'श्री-पद' खो देते हैं।

श्लोक ७८ (गुणी राजा—स्पृहणीय एवं शत्रुओं के लिए वायु-तुल्य)

श्लोक
प्रकृतिगुणसमन्वितः सुधीर्व्रजति नृपः स्पृहणीयतां पराम् । स च भवति रणेषु विद्विषांश्वसन इव प्रबलः पयोमुचाम् ॥७८॥

IAST
prakṛtiguṇasamanvitaḥ sudhīrvrajati nṛpaḥ spṛhaṇīyatāṃ parām | sa ca bhavati raṇeṣu vidviṣāṃ śvasana iva prabalaḥ payomucām ||78||

शब्दार्थ
- **प्रकृतिगुणसमन्वितः** – प्रकृतियों (सप्ताङ्ग) के गुणों से सम्यक् युक्त
- **सुधीः** – बुद्धिमान (सुपंडित)
- **व्रजति** – प्राप्त होता है
- **नृपः** – राजा
- **स्पृहणीयताम्** – स्पृहणीयता (ईर्ष्या-युक्त आदर/अभिलाषा-पात्रता)
- **पराम्** – परम/उत्कृष्ट
- **सः** – वह
- **च** – और
- **भवति** – होता है
- **रणेषु** – युद्धों में
- **विद्विषाम्** – शत्रुओं/विद्वेषियों के लिए
- **श्वसनः** – वायु/हवा
- **इव** – के समान
- **प्रबलः** – प्रबल/शक्तिशाली
- **पयोमुचाम्** – (जल को) त्यागने वाले (अर्थात् मेघों/बादलों) के लिए

भावार्थ
जो राजा अपनी सातों प्रकृतियों के गुणों से समन्वित (संयुक्त) होता है और स्वयं बुद्धिमान (सुधीः) होता है, वह **परम**

स्पृहणीयता को प्राप्त करता है—अर्थात् समस्त संसार उसके गुणों की प्रशंसा करता है और उसके पद पर आसीन होने की अभिलाषा रखता है। इसके अतिरिक्त, वह राजा **रण-क्षेत्र (युद्ध) में शत्रुओं के लिए उस वायु के समान प्रबल एवं दुर्दम्य** होता है, जो वर्षा-काल में मेघों (पयोमुचाम्) को दूर-दूर तक तितर-बितर कर देती है—अर्थात् उसकी शक्ति अप्रतिरोध्य, वेगवती एवं भयानक होती है, जिसके सामने शत्रु-सेना बिखर जाती है। यह उपमा राजा की *आक्रामक-प्रतिरक्षात्मक* क्षमता का द्योतक है।

दार्शनिक विवेचन

यह श्लोक राजा के **'दैवी-शक्ति' (ऐश्वर्य)** एवं 'प्राकृतिक-बल' (ओजस्) का संयोग है। 'वायु' (श्वसन) को उपनिषदों में *प्राण* कहा गया है, जो सृष्टि का मूल-बल है। यहाँ कामन्दक ने राजा के सामर्थ्य को 'प्राण-वायु' की उपमा दी है—जो निराकार, अत्यन्त गतिशील, अपराजेय और व्यापक है। 'पयोमुचाम्' (मेघों) के लिए वायु 'विध्वंसक' है—यह दर्शाता है कि शत्रु चाहे कितने विशाल (मेघ-समूह) क्यों न हों, सच्चा राजा उनका संहार करने में सक्षम होता है। यह **'धर्म-विजय'** का द्योतक है; क्योंकि पूर्व श्लोकों में गुणों की स्थापना धर्म-मूलक की गई थी। अतएव, जो राजा धार्मिक एवं प्रजा-पालक है, उसकी विजय 'महाभारत' के 'धर्म-क्षेत्र' की भाँति अनिवार्य है। यह राजा को 'ऋत' (ब्रह्माण्डीय-व्यवस्था) का अनुगामी बनाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक भू-राजनीति एवं सैन्य-रणनीति में 'मनोबल' (Morale) एवं 'संसाधन-प्रबंधन' (Resource Management) इस शक्ति को निर्धारित करते हैं। 'प्रकृतिगुणसमन्वितः'—एक राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक, सैन्य एवं कूटनीतिक क्षमता (National Power) जितनी समन्वित होगी, उतना ही उसकी 'स्पृहणीयता' (Soft Power) बढ़ती है। आज के युद्ध केवल सैन्य नहीं, वरन् आर्थिक, साइबर एवं बौद्धिक युद्ध हैं; जो राष्ट्र सभी क्षेत्रों में समन्वय रखता है, वह 'वायु' के समान अप्रतिरोध्य होता है—जैसे अमेरिका की सेना या चीन की आर्थिक-निर्यात क्षमता। इसके विपरीत, असमन्वित शासन (सोवियत-संघ का पतन) तितर-बितर हो जाता है। 'पयोमुचाम्' उपमा आधुनिक 'गठबन्धन युद्ध' (Coalition Warfare) पर भी लागू होती है—एक दृढ़ नेतृत्व विरोधी-गठबन्धनों को विभाजित कर सकता है।

निष्कर्ष

प्रकृतिसम्पत्प्रकरणम् का मूल संदेश यह है कि राज्य की समृद्धि का आधार केवल संसाधन या शक्ति नहीं, बल्कि गुणसम्पन्न नेतृत्व है। जिस राजा में आत्मसम्पदा, विवेक, उत्साह, सत्य, त्याग, शौर्य तथा न्यायप्रियता का समन्वय होता है, वही प्रजा का विश्वास अर्जित कर राज्य को उन्नति के पथ पर अग्रसर कर सकता है।

महर्षि कामन्दक ने इस सर्ग में स्पष्ट किया है कि नेतृत्व का वास्तविक मूल्य पद अथवा अधिकार से नहीं, बल्कि चरित्र, निर्णय-क्षमता, लोकहित, योग्य मंत्रिपरिषद् तथा नैतिक शासन से निर्धारित होता है। बुद्धि के सात गुणों से लेकर उत्साह के चार लक्षणों और मंत्री के आदर्श गुणों तक, प्रत्येक सिद्धान्त आज भी सुशासन, सार्वजनिक प्रशासन, कॉर्पोरेट नेतृत्व तथा नीति-निर्माण के लिए समान रूप से प्रासंगिक है।

संदर्भ

मूल ग्रन्थ

1. **कामन्दकीय नीतिसार** — आचार्य कामन्दक (मूल संस्कृत ग्रन्थ)।
2. **कौटिलीय अर्थशास्त्र** — आचार्य कौटिल्य।

3. **मनुस्मृति**।

4. **महाभारत** — विशेषतः शान्ति पर्व।

5. **श्रीमद्भगवद्गीता**।

6. **वाल्मीकि रामायण**।

कोश एवं सहायक ग्रन्थ

7. V. S. Apte — *The Practical Sanskrit-English Dictionary.*

8. Monier Monier-Williams — *A Sanskrit-English Dictionary.*

9. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन — *भारतीय दर्शन*।

10. भारतीय नीतिशास्त्र, नेतृत्व, राजधर्म एवं सुशासन से सम्बन्धित विभिन्न शोधग्रन्थ एवं शोधपत्र।

11. भारतीय ज्ञान-परम्परा (Indian Knowledge Systems – IKS) से सम्बन्धित समकालीन अकादमिक साहित्य।

12. **Indian Philosophy & Ethics.** *कामन्दकीय नीतिसार चतुर्थ सर्ग (प्रकृतिसम्पत्प्रकरणम्) सप्ताङ्ग राज्य, आदर्श नेतृत्व एवं सुशासन का शास्त्रीय मार्गदर्शन* उपलब्ध: https://indianphilosophyethics.blogspot.com/2026/07/kamandakiya-nitisara-tritiya-sarga.html **अभिगमन तिथि:** 25 जुलाई 2026।